चन्दामामा
फरवरी १९६५
60 पैसे
Vapa

चन्दामामा

अपने बच्चे को सर्दी-ज़ुकाम से पीड़ित न होनें दें

विक्स वेपोरब तुरन्त आराम पहुंचाता है...
आपका बच्चा आसानी से सांस ले सकता है...वह रात भर आराम से सो सकता है।

आपके बच्चे की सुख-सुविधा आप पर ही निर्भर है। इस लिए जब आपके बच्चे में सर्दी-ज़ुकाम के आरम्भिक लक्षण दिखायी दें, जैसे नाक का बहना, आंखों से पानी गिरना, गले का बैठ जाना, सांस लेने में तकलीफ, तो विक्स वेपोरब मलिये।

विक्स वेपोरब आपके बच्चे के सर्दी-ज़ुकाम का सर्वोत्तम इलाज है क्योंकि यह सर्दी से प्रभावित उन सभी भागोंपर, जैसे नाक, छाती और गले में, जहां सर्दी की पीड़ा सबसे ज्यादा होती है, असर करता है और आपके बच्चे की कोमल त्वचा को इससे तनिक भी क्षति नहीं पहुंचती।

बस विक्स वेपोरब मलिये और अपने बच्चे को कम्बल ओढ़ा कर आराम से बिस्तरपर सुला दीजिये। विक्स वेपोरब अपना काम करता रहेगा। जबकि आपका बच्चा रात भर चैन की नींद सोता रहेगा। सुबह तक सर्दी-ज़ुकाम की पीड़ा जाती रहेगी और आपका लाडला मुन्ना स्वस्थ और हंसता-खेलता उठेगा।

विक्स वेपोरब ३ साइज़ में

VV 464.

सीखने में देर क्या सबेर क्या!

एक नन्हे बालक का कपड़े पहनना सीखना उसके युवा होने का प्रमाण है। आप उसे स्वावलम्बी बनना सिखाकर शक्तिशाली बनाते हैं।

आप अपने बच्चों को अब दूसरा सबक सिखाइये कि दांतो व मसूढ़ों की रक्षा कैसे करनी चाहिये जिससे वे बड़े होकर आपका आभार मानेंगे कि सड़े गले दांत व मसूढ़ों की बीमारियों से आपने उन्हे बचा लिया।

आज ही अपने बच्चों में सबसे अच्छी आदत डालें — उन्हे दांतो व मसूढ़ों की सेहत के लिये फोरहन्स टूथपेस्ट इस्तेमाल करना सिखायें। एक दांत के डाक्टर द्वारा निकाला गया फोरहन्स टूथपेस्ट संसार में एक ही है जिसमें मसूढ़ों की रक्षा के लिये डा. फोरहन्स द्वारा निकाली गई विशेष चीजें हैं। इसके हमेशा इस्तेमाल से दांत सफेद चमकने लगते हैं और मसूड़े मजबूत होते हैं। "CARE OF THE TEETH AND GUMS", नामक रंगीन पुस्तिका (अंग्रेजी) की मुफ्त प्रति के लिये डाक-खर्च के १० पैसे के टिकट इस पते पर भेजें: मॅनर्स डेन्टल एडवायजरी ब्यूरो, पोस्ट बैग नं. १००३१, बम्बई-१.

COUPON C. 1

Please send me a copy of the booklet
"CARE OF THE TEETH AND GUMS"

Name ____________________

Address ____________________

____
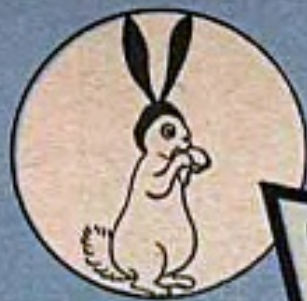
चन्दामामा

संचालक: चक्रपाणी

हम "चन्दामामा" में महाभारत की पूरी कहानी, चित्रों के साथ दे चुके हैं और आजकल "रामायण" दे रहे हैं।

महाभारत और रामायण भारत के गौरव ग्रन्थ हैं। ज्ञान भण्डार हैं। स्फूर्ति के स्रोत हैं। उनकी अमरता उनकी सर्वकालोपयोगिता सिद्ध करती हैं।

हमने महाभारत की बहुत-सी कहानियाँ दी हैं, और वे पाठकों द्वारा चाव से पढ़ी भी गई हैं। इस अंक में हम अर्जुन और कृष्ण से सम्बन्धित एक कहानी दे रहे हैं। हम आगे भी इसी तरह की कहानियाँ समय समय पर देते रहेंगे।

वर्ष: १६ फरवरी १९६५ अंक: ६
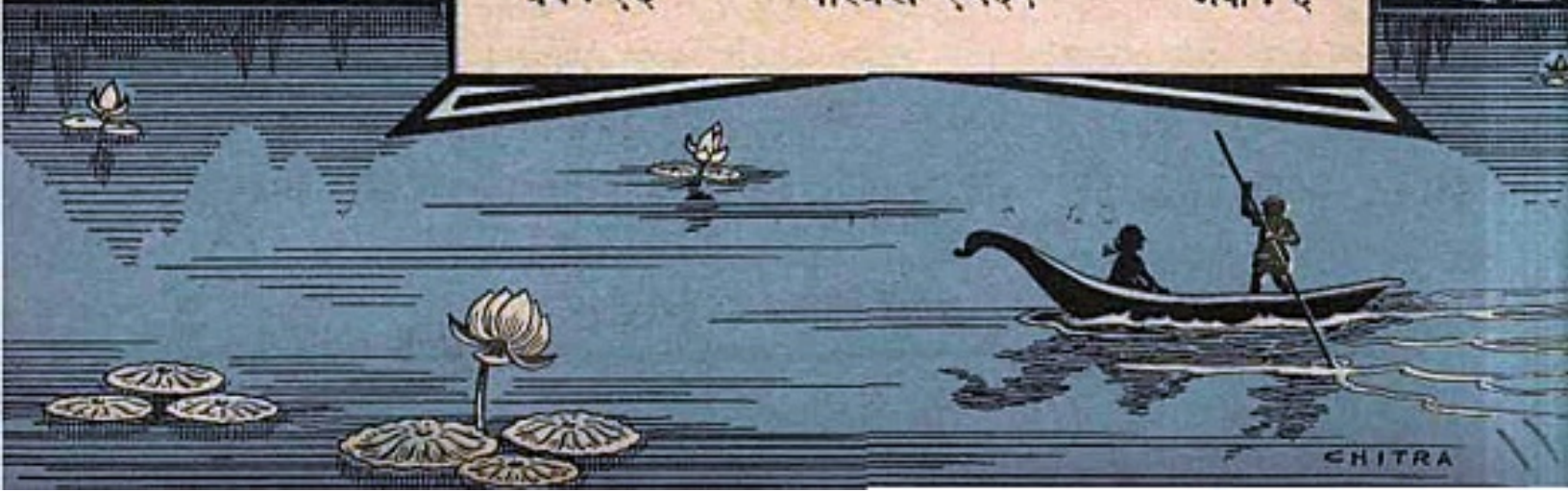
भारत का इतिहास

बंगाल को पूरी तरह अपने आधीन करने के लिए शेरखान ने १५३७ अक्तोबर में उसकी राजधानी गौर को घेर लिया।

हुमायूँ को, जो गुजरात, मालवा जीतकर वापिस आते आगरे में भोगविलास में मस्त था, यह बहुत देर बाद ही मालूम हुआ कि उसके पूर्व साम्राज्य में कोई आ गया था।

वह शेरखान का मुकाबला करने के लिए दिसम्बर के दूसरे सप्ताह में निकला। वह सीधे गौर न गया, बल्कि बीच में उसने चुनार का घेरा डाला। चुनार की सेना मुगलों के सामने न झुकी, और छः मास तक उनको वहीं रहना पड़ा। इस बीच बंगाल में शेरखान ने १५३८ एप्रिल में गौर को जीत लिया।

बिहार में अपमानित होकर, हुमायूँ १५३८ जुलाई में जब गौर पहुँचा, तो शेरखान ने उसका मुकाबला न किया। उसने बिहार और जौनसार के मुगल प्रान्तों पर आक्रमण किया और पश्चिम में कन्नौज तक उसने अपने वश में कर लिया।

हुमायूँ जो गौर में विलास में पड़ा था, पश्चिमी प्रान्तों में शेरखान के कारनामें सुनकर, बंगाल से आगरा की ओर निकला। रास्ते में शेरखान की सेनाओं और अफगान की सेनाओं ने हुमायूँ की सेना का सामना किया, उन्होंने १५३९ जून में मुगल सेनाओं का नाश कर दिया। जब अनजाने हुमायूँ गंगा में कूदा, तो एक भिश्ती ने उसके प्राण बचाये।

दिल्ली सुल्तान पर विजय पाने के कारण शेरखान का आधिपत्य पश्चिमी आसाम की

पर्वतश्रेणी तक, पूर्व की ओर चिटगांग तक उत्तर में हिमालय तक, दक्षिण में बंगाल की खाड़ी तक विस्तृत हो गया। उसने शेरशाह नाम से अपने सिक्के भी बनवाने शुरु किये।

अगले साल हुमायूँ ने अपने राज्य के लिए फिर एक बार प्रयत्न किया। इस प्रयत्न में उसने अपने भाई की बहुत मदद माँगी, पर वह उसे न पा सका।

१५४०, १७ मई का कन्नौज के पास मुगल और अफगानों की सेना में मुठभेड़ हुई। अफगान ही जीते। हुमायूँ जैसे तैसे जीता बच गया। इस प्रकार बाबर का किया हुआ सारा प्रयत्न व्यर्थ गया और हिन्दुस्तान में फिर अफगानों का शासन आरम्भ हो गया। इसके बाद हुमायूँ पन्द्रह वर्ष तक यूँहि घूमता फिरता रहा।

इस हालत में भी बाबर के और लड़कों ने हुमायूँ की मदद न की। हुमायूँ ने लाहौर जाकर उनकी मदद माँगी, पर वह अपने प्रयत्न में सफल न हो सका।

यही मौका देख शेरशाह ने अपना राज्य आसानी से बढ़ा लिया। उसने पंजाब का
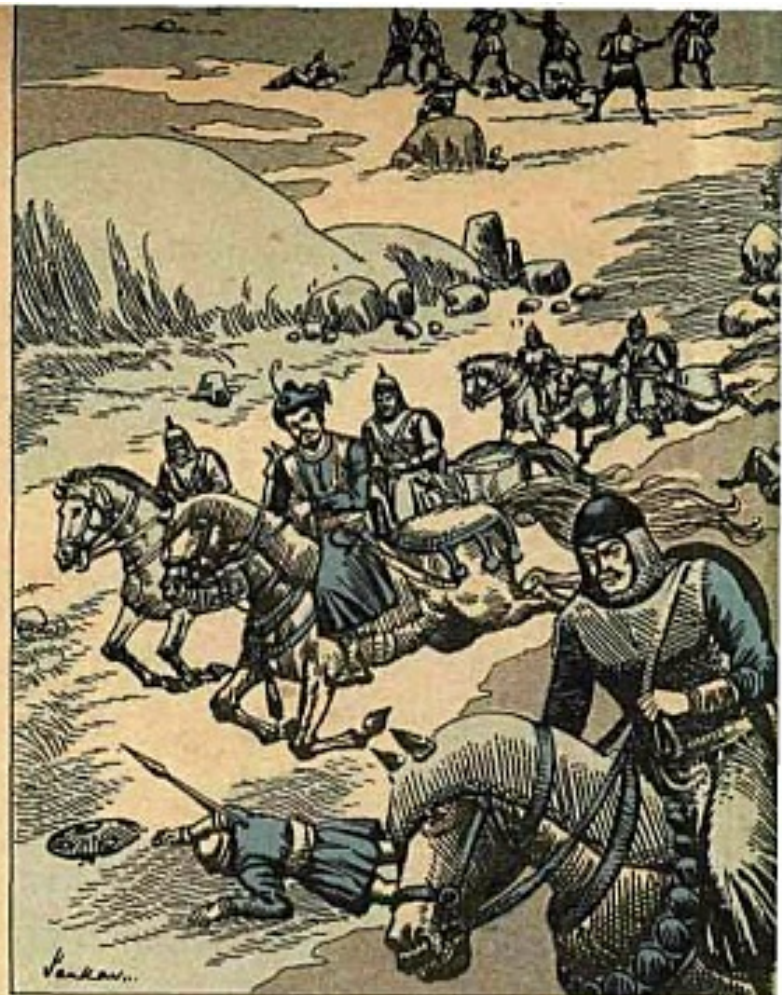
कुछ हिस्सा जीत लिया। १५४२ में राजपूतों से युद्ध करके उसने मालवा को अपने वश में कर लिया। मध्य भारत में रायसीन किले पर हमला करने गया। वहाँ की सेनाओं ने कुछ देर मुकाबला किया। फिर वे हार मान गईं।

राजपूतों ने कहा यदि उनको मालवा छोड़कर जाने दिया गया, तो वे किला अफगानों को सौंप देंगे। पर जब वे किले से निकले, तो अफगानों ने उन पर हमला किया। अपने पत्नी और पुत्रों को मान न भंग हो, राजपूतों ने उनको

मारकर शत्रुओं से वीरोचित रूप से लड़कर अपने प्राण दे दिये। यह १५४३ में हुआ। यह घटना शेरशाह के जीवन में कलंक-सा है।

पंजाब में शेरशाह के प्रतिनिधि ने सिन्धु और मुल्तान का राज्य अफगान साम्राज्य में मिलाया। अब शेरशाह का प्रबल शत्रु, मारवाड़ का राजा मालदेव मात्र ही रह गया था। वह युद्धतंत्र का अच्छा ज्ञाता था, उसके राज्य का क्षेत्रफल दस हज़ार वर्गमील था। मालदेव से हराये गये राजपूतों की प्रेरणा पर १५४४ में उसने मालदेव पर आक्रमण किया, मालदेव युद्ध के लिए तैयार था ही।

मालदेव की सेनाओं से उसी के राज्य में मुकाबला न करने के लिए शेरशाह ने एक चाल सोची। उसनें चिट्ठियाँ बनाकर कि कुछ राजपूत उसकी मदद देने के लिए मान गये थे, उसके पास भेजीं।

मालदेव घबरा गया, युद्ध का प्रयत्न छोड़कर वह अपने सिवन किले में छुप गया। तब भी कई राजपूत वीरों ने अपनी अपनी सेना के साथ अफगान सेनाओं का मुकाबला किया, परक्रम दिखाया। युद्ध में शेरशाह जीत तो गया, पर वह हज़ारों सैनिक खो बैठा। साम्राज्य खोते खोते बचा। यह राजपूतों के लिए भी बड़ी चोट थी। उत्तर हिन्दुस्तान पर अफगानों का कब्जा हो गया। शेरशाह अजमेर से आबू तक के प्रान्त को जीतता गया। आखिर उसने कालिंजर किले को घेरकर अपने वश में कर लिया। इसी समय २२ मई, १५४५ में बन्दूक की बारूद के फूट जाने के कारण शेरशाह की मौत हो गई।

नेहरू की कथा

[७]

१९ फरवरी, १९१५ में गोखले की मृत्यु के कारण उदारवादियों का पक्ष कुछ दुर्बल हो गया। गान्धी जी, जो अप्रैल १८९३ में दक्षिण अफ्रीका चले गये थे, गोखले की मृत्यु से कुछ दिन पहिले ९ जनवरी, १९१५ में स्वदेश आये। उन्होंने गोखले को वचन दिया कि वे एक वर्ष तक राजनीति में प्रवेश न करेंगे। एक वर्ष उन्होंने देश में भ्रमण करते बिताया।

युद्ध की तैयारियों के विरुद्ध देश में कोई आन्दोलन न था। नेशनल डिफेंस फोर्स में, जो तभी तभी देश में बन रही थी भरती होने के लिए श्री नेहरू ने दरख्वास्त भी दी। गान्धीजी ने भी ब्रिटिश कर्मचारियों को वचन दिया था कि वे युद्ध की तैय्यारियों में उनकी मदद करेंगे। मोतीलालजी की पत्नी की तरह गान्धीजी की पत्नी कस्तूरबा ने भी फौजियों के लिए पोषाकें तैयार की थीं। ३ जून, १९१५ में ब्रिटिश राजा के जन्मदिवस के सम्बन्ध में, युद्ध में "ब्रिटिश साम्राज्य सेवा" के उपलक्ष्य में गान्धीजी को केसरे हिन्द का पदक भी मिला था।
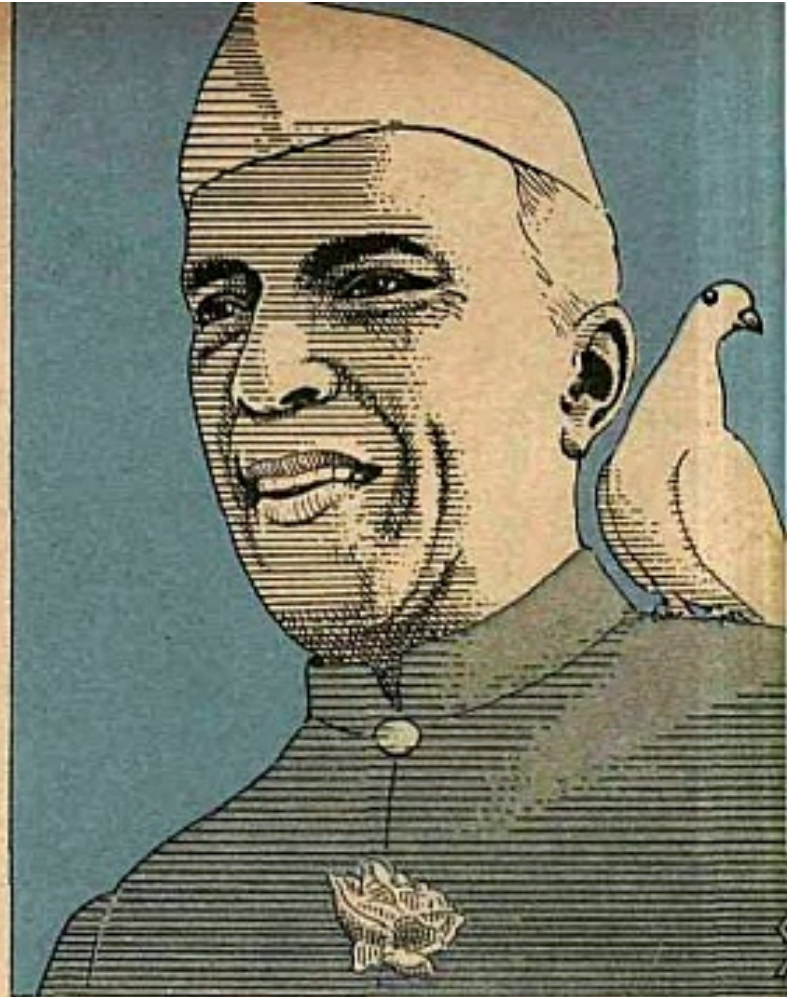
यह सब जवाहरलाल नेहरू की मानसिक अशान्ति को कम न कर सकी। तब उनके मन में सोशलिस्ट विचार भी न थे। राष्ट्रीय भावनायें आ गईं थीं। अभी वे सकुचा रहे थे, खड़े होकर वे भाषण भी नहीं कर सकते थे। १९१५ में एक छोटी-सी सभा में जब उन्होंने खड़े होकर दो चार शब्द कहे, तो मंच पर बैठे तेजबहादुर सप्रू ने उनका मंच पर ही आलिंगन कर

धार्मिक भावनाओं से वे चिढ़ से गये थे। इस कारण उन्होंने हिन्दु मुस्लिम एकता के लिए किये जानेवाले प्रयत्नों का स्वागत किया। मोतीलाल नेहरू का भी यही ख्याल था, कि यदि राष्ट्रीय कान्ग्रेस और मुस्लिम लीग का समझौता न हुआ, तो देश का भी कोई भविष्य न था। १९१६ में जब मोतीलाल के मकान में कान्ग्रेस कमेटी की सभा हुई हिन्दु मुस्लिम समझौते के लिए एक प्रस्ताव पेश किया गया। १९१६ में दिसम्बर में लखनऊ के कान्ग्रेस अधिवेषन में उस प्रस्ताव का समर्थन भी किया गया।
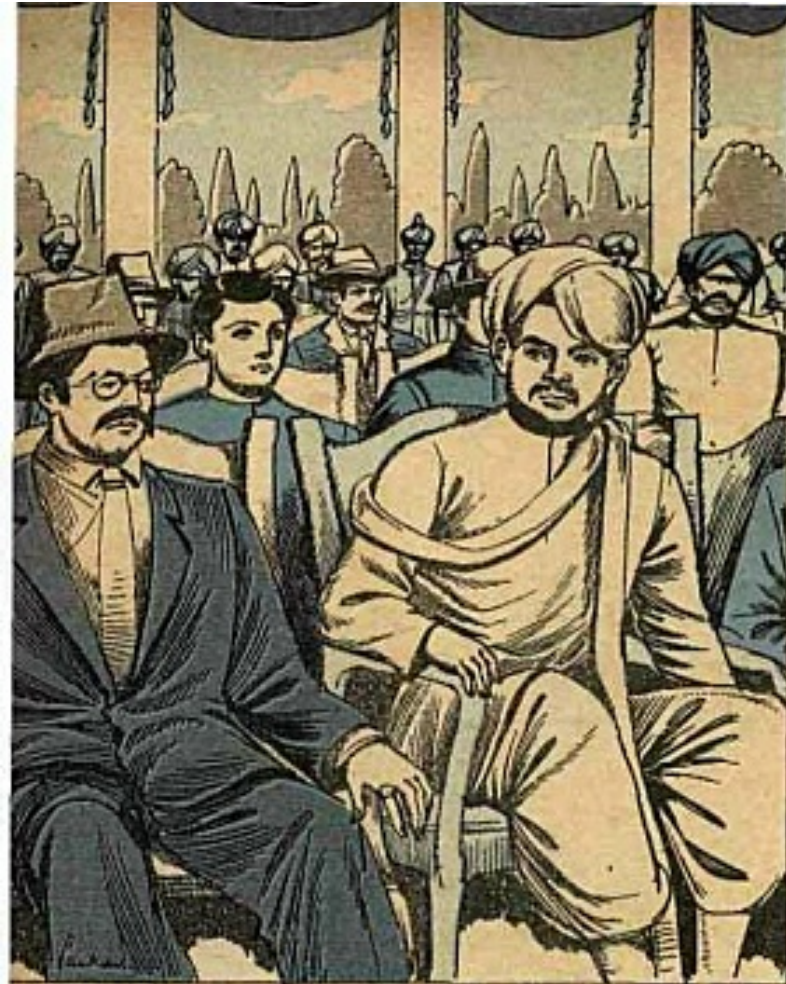
लिया। "उनके आनन्द का कारण न मेरे भाषण का विषय था, न शैली ही। उनके आनन्द का केवल यही कारण था कि पाँच दस आदमियों के सामने उठकर भाषण कर सका था। नये प्रजा सेवक चाहिए थे। उन दिनों प्रजा सेवा का मतलब भाषण करना ही था।" नेहरू ने कहा।

राजनीति में धार्मिक भावनाओं को घुसेड़ना जवाहरलालजी को बिल्कुल पसन्द न था। इसलिए यद्यपि तिलक की राष्ट्रीयता ने उनको आकर्षित किया था पर उनकी

हिन्दु मुस्लिम एकता के लिए जिन नेताओं ने काम किया था, उनमें मुख्य थे, अबुल्कलाम आजाद, शौकत अलि और महम्मद अलि।

इस लखनऊ अधिवेषन में जवाहरलाल ने पहिली बार गान्धीजी को देखा, तब तक गान्धीजी का भारतीय राजनीति में कोई स्थान न था। उससे पहिले जब बम्बई में अधिवेषन हुआ था और वे एक कमेटी के लिए निर्वाचित न हो सके, तो उनको उसमें अध्यक्ष द्वारा मनोनीत

किया गया था। लखनऊ अधिवेषन में भी किसी ने उनकी परवाह न की। कई जानते भी न थे कि गान्धीजी कौन थे। लखनऊ अधिवेषन के मुख्य व्यक्ति थे तिलक।

१९१६ में तिलक ने पहिले पहल होम रूल लीग की स्थापना की। भारतीय राजनीति से सम्बन्धित अनीबीसेन्ट ने भी होम रूल लीग की स्थापना की। उनके कारण राष्ट्रीय आन्दोलन को बहुत स्फ़ूर्ति मिली। जवाहर पर गान्धीजी के प्रभाव से पहिले अनीबीसेन्ट का प्रभाव, कान्ग्रेस के अध्यक्षपद को अलंकृत करनेवाली सरोजिनी देवी नायडू की कविता का प्रभाव पड़ा।

१९१७ में गान्धीजी ने संचार किया। उत्तर बिहार में चम्परान में उन्होंने सुना कि नील के बागानों में काम करनेवाले मजदूरों को सताया जा रहा था। वे वहाँ गये। बागों के मालिक अंग्रेजी सरकार की रौब में अकड़ से गये थे। उन्होंने गान्धीजी को चम्परान छोड़कर जाने के लिए कहा। गान्धीजी ने कहा कि जब तक चम्परान के मजदूरों की शिकायतें नहीं सुनी जातीं, तब तक वे न जायेंगे। इस पर उनको कोर्ट में हाजिर होने के लिए समन
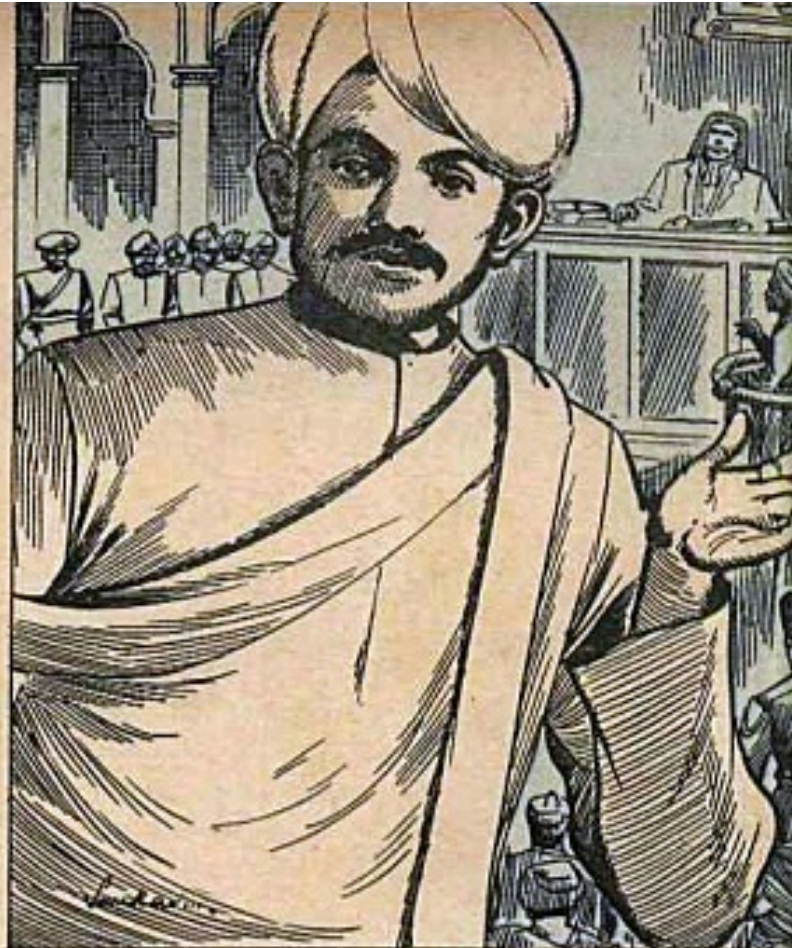
आया। गान्धी गये। उन्होंने "अपराधी" के तौर पर कोर्ट में जो बातें कहीं, उनको सुनकर, उन पर किये गये आरोपणों को वापिस ले लिया गया। यही नहीं, सरकार ने स्वयं मजदूरों की शिकायतें सुनने के लिए एक समिति बनाई और उसमें गान्धीजी को स्थान दिया। इसके कारण एक कानून बनाया गया जिससे चम्परान के मज़दूरों के कष्ट कुछ हद तक दूर भी हो गये। इस तरह गान्धीजी ने पहिली बार दिखाया कि उनकी पद्धति भारत में भी सफल हो सकती थी।

देश में राजनैतिक चेतना बढ़ती जाती थी। जवाहरलाल बड़े भावुक स्वभाव के थे। मोतीलाल को भय था कि कहीं उनका लड़का क्रान्तिकारियों में न मिल मिला जाये। उनको सिवाय जेल और फाँसी के कुछ न दिया जाता था। वे स्वयं उदारवादी थे। उग्रवाद उनको पसन्द न था। परन्तु लड़का राष्ट्रीयता के विचारों से अभिभूत था। पिता का हृदय उस तरफ़ भी आकर्षित हो रहा था।

मोतीलाल इसी द्विविधा में थे। १९१७ जून में, सरकार ने अनीबीसेन्ट को जेल में डाल दिया। इसके कारण होमरूल आन्दोलन कम न होकर और बढ़ा। कई उदारवादी उसमें शामिल हुए। उनमें मोतीलाल भी एक थे। उनमें अनीबीसेंट के प्रति बहुत आदर भाव था। इसलिए वे होमरूल लीग में शामिल हो गये और बाद में, उसकी अलहाबाद शाखा के अध्यक्ष भी हो गये।

जर्मनी के साथ होनेवाले युद्ध में, मित्र राज्यों की हालत बिगड़ती ही जाती थी। इसलिए भारत के प्रति ब्रिटेन की नीति में कुछ परिवर्तन हुआ।

सितंबर में, अनीबीसेंट को छोड़ा गया। आश्वासन दिया गया कि भारत विधान में परिवर्तन किये जायेंगे।

अलहाबाद में कान्ग्रेस वर्किन्ग कमेटी के साथ, मुस्लिम लीग का भी अधिवेषन हुआ और दोनों में निश्चय किया गया कि देश को स्वायत्त शासन दिया जाय। "आपत्ति के समय में, स्वायत्त भारत, ब्रिटेन की और सन्तोषपूर्वक मदद कर सकेगा।" तिलक ने कहा।

[८]

[मन्थारण का किला पठान सेनापति उस्मानखान के वश में आ गया। दुर्गपति वीरेन्द्रसिंह घायल होकर, कैदी बना लिया गया। उसकी लड़की तिलोत्तमा और दासी विमला भी उस्मानखान द्वारा पकड़ ली गई। जगतसिंह, राजा मानसिंह का लड़का, जिसने पठानों के उपद्रव को दूर करने का बीड़ा उठाया था अपनी प्रियतमा, तिलोत्तमा से एक बार मिलने किले में घुसा। वह पठानों से लड़ा। बुरी तरह घायल हो गया। वह मरने को ही था, कि पठानों ने उसको भी पकड़ लिया।]

जगतसिंह को फिर होश आया। उसने आँखें खोलकर देखा। वह तब एक सुन्दर कमरे में एक सुन्दर बिस्तरे पर लेटा हुआ था। वह बड़ा विशाल कमरा था। इतना विशाल कि उसने उतना विशाल कमरा कभी न देखा था। वह निर्जन प्रदेश-सा था। निश्शब्द, प्रशान्त। एक स्त्री, पैदाने पर बैठी उस पर सुगन्धित जल छिड़क रही थी। एक और कुछ दूरी पर निश्चल खड़ी थी।

जगतसिंह जिस दान्त के पलंग पर लेटा था, उसी पर एक बलवान पठान, अच्छे कपड़े पहिनकर, पान चबाता, कोई फ़ारसी पुस्तक पढ़ रहा था।

श्री बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय

उनमें से कोई भी बात नहीं कर रहा था। सर्वत्र नीरवता थी।

युवराज ने चारों तरफ़ देखकर करवट बदलनी चाही। पर वह बदल न सका। उसके अंग अंग में असह्य दर्द हो रहा था।

उसको करवट बदलने की कोशिश करता देख, पैदाने पर बैठी स्त्री ने बड़े मीठे ढ़ंग से कहा—"हिलिए मत, जैसे लेटे हुए हैं, वैसे ही लेटे रहिये।"

उसने धीमे से पूछा—"मैं कहाँ हूँ?"

"आप बात न कीजिये, आप अच्छी जगह ही हैं। कुछ सोचिये मत, आराम कीजिये।"

"अब क्या समय होगा?"

"तीसरा पहर है। निश्चिन्त रहिये, यदि आप यों कुछ सोचने विचारने लगे, तो जल्दी आराम नहीं मिलेगा। यदि आप चुप रहे, तो हम सब यहाँ से जा सकते हैं।"

बड़ी तकलीफ के साथ युवराज ने फिर पूछा—"एक और बात। तुम कौन हो?"

"अयाशा।"

वह काफी देर तक अयाशा की ओर देखता रहा। उसे लगा कि उसने पहिले उसे कहीं न देखा था।

अयाशा की उम्र शायद बीस बाईस की होगी। वह बड़ी सुन्दर थी। जगतसिंह को उसे देख तिलोत्तमा याद हो आयी। तुरत उसका दिल थम-सा गया, खून उभर-सा आया। उसके घावों से फिर खून बहने लगा। वह यकायक फिर बेहोश हो गया।

अयाशा घबराती उठी। पलंग पर बैठा आदमी जो पुस्तक पढ़ रहा था, रह रहकर

आँखें उठाकर, अयाशा की ओर प्रेम से देखने लगा। अयाशा ने उसके कान में कहा—"उस्मान, हकीम के पास तुरत खबर भिजवाओ।"

तुरत उस्मान उठकर बाहर चला आया। वह पलंग के पास चान्दी की तिपाई पर रखे, एक पात्र में से कुछ द्रव लेकर, युवराज के मुँह पर छिड़कने लगी।

जल्दी ही उस्मानखान, हकीम को लेकर वापिस चला आया। हकीम ने खून का निकलना बन्द कर दिया। वह कुछ दवा देकर, शारीरिक स्थिति बतलाकर, जाने के लिए तैयार हो गया।

अयाशा ने हकीम के कानों में पूछा—"कैसा है उनका हाल चाल?"

"ज्वर तो खतरनाक है।" यह कहकर हकीम निकला। उस्मानखान उसको दरवाजे तक छोड़ने गया। "जान पर खतरा नहीं है।" "देखिये, जब फिर दर्द होने लगे, तो मुझे बुला भेजिये।" यह कहकर हकीम चला गया।

उस दिन रात को, काफी देर तक अयाशा और उस्मानखान जागे ही रहे। हकीम कई बार आकर उसे देख गया। अयाशा उसकी निरन्तर परिचर्या कर रही थी, रात के तीसरे पहर एक दासी ने आकर कहा—"बेगम साहिबा, आपको याद कर रही है।"

"हाँ, अभी आयी।" कहती अयाशा खड़ी हो गई। उस्मानखान भी पलंग छोड़कर खड़ा हो गया।

"क्या तुम भी जा रहे हो?" अयाशा ने उससे पूछा।

"काफी देर हो गई है। चलो, मैं तुम्हें वहाँ छोड़ आऊँगा।" उस्मानखान ने कहा।
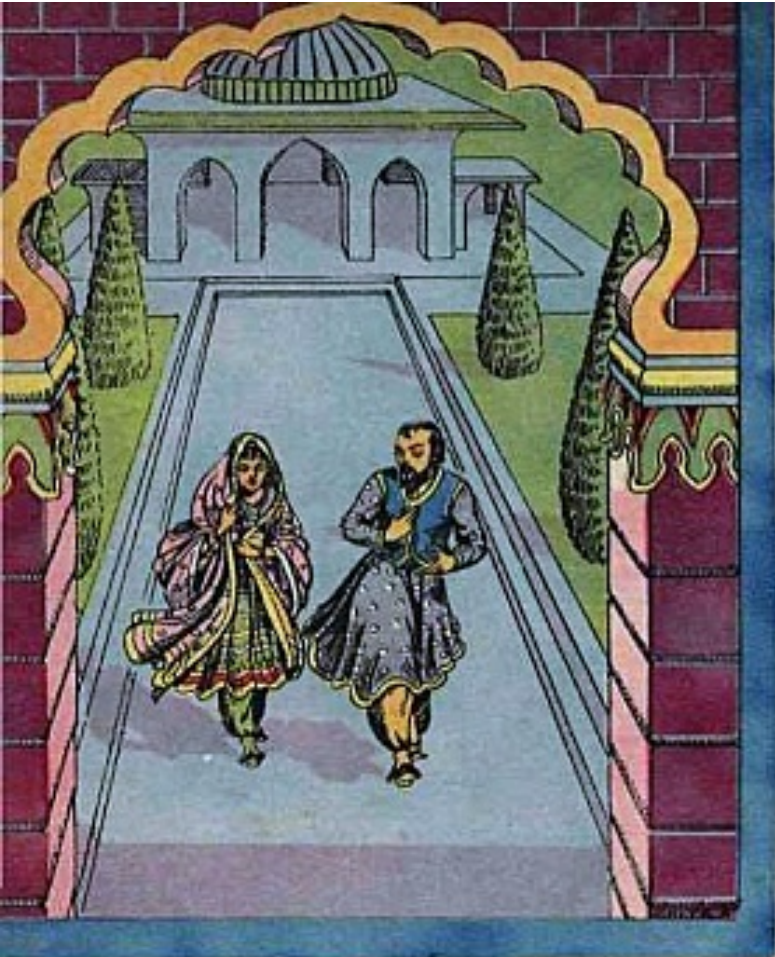
अयाशा, जो कुछ दासियों से वहाँ कहना था, कहकर, राजकुमार की अच्छी देख भाल करने के लिए आज्ञा देकर, वह अपनी माँ के पास चली गई।

रास्ते में उस्मानखान ने उससे पूछा—"क्या आज तुम बेगम साहिबा के यहाँ ही रहोगी?"

"नहीं, मैं फिर राजकुमार के पास आ जाऊँगी।" अयाशा ने कहा।

"अयाशा, तुम्हारी अच्छाई की कोई हद तो नहीं मालूम होती। जो सेवा तुम इस जानी दुश्मन की कर रही हो, वह उसकी बहिन भी न करेगी? तुम उसे प्राण दान कर रही हो।"

अयाशा ने मुस्कराते हुए कहा—"उस्मान! मेरा स्त्री स्वभाव है। दुखियों की सेवा करने से बढ़कर, मेरे लिए कोई और बड़ा धर्म नहीं है। क्या फिर तुम्हारी दया कोई कम है? तुम क्यों अपने जानी दुश्मन को बचाने की सोच रहे हो?"

"तुम चूँकि उदार हो, इसलिए तुम सोच रही हो कि मैं भी उदार हूँ। पर बात दूसरी है। मेरा तो यह ख्याल है, यदि जगतसिंह हमारे हाथ में रहेगा, तो मानसिंह भी हमारे हाथ में रहेगा। हम उससे उस तरह की सन्धि कर सकेंगे, जैसा कि हम चाहेंगे। यदि यह नहीं हुआ और अगर हमने जगतसिंह को मानसिंह को सौंप दिया, तो वह हमें खूब धन देगा। इसलिए जगतसिंह की प्राण रक्षा करना हमारे लिए फ़ायदेमन्द ही है। इस विषय में मैं लापरवाही नहीं कर सकता।" उस्मान ने कहा।

"उस्मान, अगर सब तुम्हारी तरह स्वार्थ और दूर दृष्टिवाले हों, तो धर्म से कोई वास्ता न रहेगा।" अयाशा ने कहा।

"महाराज! आपको जो सपना आया है, बिल्कुल झूठा नहीं है। मैं वीरमल का लड़का ही हूँ। यह भी सच है कि मैं आपको मार देना चाहता था। पर मैने अपनी इच्छा को रोके रखा।" जयमल ने कहा।

इन्द्रदत्त यह सुन चकित रह गया। उसने पूछा—"तो क्यों नहीं तुमने मुझे मारा?"

जयमल ने उस प्रश्न का उत्तर न देकर कहा—"इस प्रकार की परिस्थिति फिर भी आ सकती है। इसलिए मुझे अंगरक्षक बनाये रखना आपके लिए ठीक नहीं है। मुझे जाने दीजिए।"

इसका इन्द्रदत्त ने कोई उत्तर न दिया। अपने आदमियों के पास आते ही उसने कहा—"इसको पकड़ लो।"

उसके पास केवल एक भाला था—फिर भी वह खूब लड़ा। उसने सबको घायल कर दिया। खुद भी जख्मी हुआ। वह पकड़ा गया।

इन्द्रदत्त उसको राजधानी ले गया। उसके चोटों की मरहम पट्टी करवायी। कुछ दिनों बाद, वीरमल के पहिले राज्य

का उसे राजा बनाकर, इन्द्रदत्त अपने राज्य में चला गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजा, मुझे कुछ सन्देह हैं। जयमल्ल ने इन्द्रदत्त को क्यों नहीं मारा? क्या कारण था? भय? या राजभक्ति? या अपने माँ-बाप के किये हुए समझौते के बारे में लिहाज? इन्द्रदत्त ने जयमल्ल को बीरमल्ल राज्य क्यों दे दिया था? इसलिए कि उस पर आपत्ति आ सकती थी? या इसलिए कि उसने उसको बिना मारे छोड़ दिया था, वह कृतज्ञ था? यदि इन सन्देहों का तुमने जान बूझकर उत्तर न दिया, तो तुम जानते ही हो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"इन्द्रदत्त प्रजा रंजक था। प्रजा के हित में यदि वह शासन न कर रहा होता, तो जयमल्ल उसको अवश्य मार देता। उसके पिता ने प्रजा को सुखी न रखा था। उस हालत में यदि वह इन्द्रदत्त को मार देता, तो लोग उसको देखकर खुश न होते। उसकी तरफ न आते। इसलिए ही उसने राजा को नहीं मारा था। जयमल्ल में, जो सामर्थ्य और शौर्य था उससे अनुमान किया जा सकता था कि वह उत्तम-शासक बनेगा। उसके शासन में अराजकता नहीं आयेगी। इसी विश्वास में, इन्द्रदत्त ने उसके पिता का राज्य उसे वापिस दे दिया था। यही कारण है।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा। [कल्पित]

जयमल्ल देश की परिस्थिति का अध्ययन करने लगा। इन्द्रदत्त शासन में तो कठिन था, पर स्वभाव से वह क्रूर न था। उसकी नौकरी में कई ऐसे थे, जो उसके लिए प्राण तक न्योछावर करने को तैय्यार थे। उसके नाम से ही दुष्ट डर जाते थे, प्रजा को किसी प्रकार का भय न था। जब उसका पिता राजा था, तो प्रजा भयभीत थी। यह सुनकर जयमल्ल को बड़ा दुःख हुआ।

इन्द्रदत्त प्रायः शिकार के लिए जाता। जयमल्ल की शिकार में निपुणता ने इन्द्रदत्त को और भी प्रभावित किया। क्रूर, हिंसक जन्तुओं को, केवल लाठी से जयमल्ल को मारता देख, इन्द्रदत्त चकित हो गया। जयमल्ल में भय का नामों निशान न था। इसके बाद, बिना जयमल्ल को साथ लिये, इन्द्रदत्त कभी शिकार पर न गया।

एक बार इन्द्रदत्त शिकार के लिए निकला। राजा शिकार करता करता, अपने लोगों को पीछा छोड़ बहुत दूर आगे चला गया। जब वह पीछे मुड़ा, तो उसने देखा कि केवल जयमल्ल ही उसके साथ आ रहा था।

इन्द्रदत्त ने एक पेड़ के नीचे घोड़े से उतरकर, आराम करने की ठानी। पर तकिया न था। उसकी तकलीफ़ देख, जयमल्ल ने अपनी जाँघ पर, राजा का सिर रख लिया और उसे सोने दिया। लेटते ही राजा सो भी गया।

अपने शत्रु को मारने के लिए जयमल्ल को यह अच्छा मौका मिला। एक नौकीले भाले को वह क्षण में, उसकी छाती में भोंक सकता था, वह वैसा करना भी चाहता था। परन्तु जयमल्ल ने उस इच्छा को काबू में रखा।

इतने में इन्द्रदत्त "पकड़ो, पकड़ो" कहता हड़बड़ाता नीन्द से उठा। जयमल्ल उठकर, कुछ सहमा। "तुम ही हो। मैं एक खराब सपना देख रहा था। मैं इसी तरह वीरमल्ल के लड़के की जाँघ पर सिर रखे सो रहा था। वह मुझे देखकर, आँखों से अंगारे बरसाता, एक भाला लेकर, मेरी छाती में घुसेड़ने आया, मैं डर के कारण चिल्लाया। इतने में मैं उठ गया।"

राजा का चिल्लाना उसके आदमियों को भी सुनाई दिया। वे जिस तरफ़ से आवाज़ आयी थी, उस ओर भागे।

राज्य की आकाँक्षा

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह फिर पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव उतारकर, कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा तब शव में स्थित बेताल ने कहा— "राजा, तुम मेहनत करो, तो करो, पर कहीं ऐसा न हो कि जब फल मिलने का समय आये, जयमल की तरह उसे खो बैठो। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, जयमल की कहानी सुनाता हूँ। सुनो" वह यों कहानी सुनाने लगा।

एक बार पैठन देश के राजाओं ने मिलकर निश्चय किया कि आपस में वे युद्ध न करेंगे।

युद्ध के कारण हर किसी का नुक्सान होता था। यदि सब राजा मैत्रीपूर्वक रहे, तो जनता सुखी रहेगी। राज्य समृद्ध बनेगा।

बेताल कथाएँ

वह बिना दान्त के साँप की तरह असमर्थ हो जायेगा।

इसलिए इन्द्रदत्त ने वीरमल्ल के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। सेना के साथ उसने आक्रमण कर दिया।

वीरमल्ल ने इन्द्रदत्त को रोकने के लिए और राजाओं के पास खबर भेजी। उन्होंने यह कहकर टाल दिया, कि दो राज्यों की आपसी बातों में दखल देना, उनके पिता द्वारा किये-गये समझौते के विरुद्ध था।

वीरमल्ल में न युद्ध करने की इच्छा थी न शक्ति ही। इसलिए वह अपनी पत्नी और लड़की को लेकर विन्ध्याचल में कहीं भाग गया।

पैठन देश के उस पीढ़ी के राजाओं ने इस निश्चय का पालन भी किया। पर सब देशों को इसके कारण लाभ न मिला।

राजा वीरमल्ल के राज्य में दुष्ट बढ़ गये। अराजकता बढ़ गई। वीरमल्ल बड़ा सीधा था, बूढ़ा भी, इसलिए वह अराजकता के बारे में युद्ध न कर सका। परन्तु इन्द्रदत्त, जो अभी नया गद्दी पर आया था, अपनी सीमा पर अराजकता न सह सका। उसका ख्याल था कि उसके पिता ने जो समझौता किया था, वह ठीक न था। राजा यदि बल का प्रयोग न करे, तो

बिना किसी खून खराबी के वीरमल्ल का राज्य इन्द्रदत्त के वश में आ गया। उसने कठिन कानून बनाये, देश में दुष्ट शक्तियों का दमन किया। प्रजा के जीवन को सुधारा। प्रजा का उसने यों कल्याण भी किया।

वीरमल्ल ने जो विन्ध्याचल में रह रहा था, थोड़े दिनों बाद मरते समय अपने लड़के जयमल्ल को बुलाकर बताया कि कैसे वह राज्य खो बैठा था—"बेटा, मैंने एक

समझौते के मुताबिक शत्रु इन्द्रदत्त से युद्ध न किया और राज्य छोड़कर चला आया। पर यदि तुम राज्य चाहते हो, तो इन्द्रदत्त को हराकर अपना राज्य ले लो। हमारी पीढ़ी ने जो समझौता किया था वह तुम पर लागू नहीं होता और तुम अब राजा भी नहीं हो।" उसने कहा।

पिता के मर जाने के बाद, जयमल्ल ने अपने पिता के राज्य को फिर पाने का निश्चय किया। उसमें राज्य के लिए लालसा थी। यही नहीं, जंगलियों के साथ घूम-घामकर अकेले भयंकर जन्तुओं का शिकार करने में भी वह निपुण हो गया था, उसमें असाधारण साहस भी था।

पर जयमल्ल जानता था कि यदि उसको अपना राज्य वापिस लेना था, तो उसके लिए उसको बहुत कुछ करना कराना होगा। उसमें साहस था, शक्ति थी, सब कुछ था, पर उसमें योद्धा के लिए आवश्यक अस्त्र विद्या न थी। शिकार में, या मार पीट में जयमल्ल से कोई बड़ा न होगा। पर युद्ध का रास्ता कुछ और था। उसमें अस्त्र विद्या में निपुण होना आवश्यक था, जो राज्य के लिए लड़ रहा है उसके

पास सेना का होना भी आवश्यक है। यह सब पाने के लिए काफ़ी देर मेहनत भी करनी होगी।

इसलिए जयमल्ल अपनी माँ को लेकर पैठन देश आया और एक छोटे राज्य में रहकर, वहाँ अस्त्र विद्या सीखने लगा। फिर वह एक और राजा के पास गया और वहाँ के राजा के पास एक सैनिक के रूप में काम करने लगा। जल्दी ही उसने यश भी पा लिया।

कुछ दिन बाद उसकी माँ भी गुजर गई। तब वह राज्य प्राप्त करने के लिए रात दिन सोचने लगा। इन्द्रदत्त को युद्ध में हराकर, अपने पिता का राज्य लेना असम्भव था। उसके लिए आवश्यक सेना और धन वह जमा नहीं कर सकता था।

अब एक ही रास्ता रह गया था—युक्ति मार्ग। जो शक्ति से नहीं पाया जा सकता है, वह युक्ति से पाया जा सकता है। इसलिए जयमल्ल ने अपना नाम बदलकर इन्द्रदत्त की सेना में भरती होना चाहा। उसने सोचा कि यदि यह प्रकट कर देगा कि वह कौन था, तो सेना और प्रजा उसको राजा स्वीकार कर लेगी। इस तरह उसको घूम फिरकर सेना इकट्ठी करने की भी कोई जरूरत न थी। चूँकि युद्ध की आवश्यकता न थी इसलिए अपने पिता के समय का समझौता भी भंग न होता था।

यह सोचकर जयमल्ल अपने पिता के राज्य में गया। इन्द्रदत्त की सेना में भी शामिल हो गया। जयमल, जो कुछ शक्तियाँ उसके पास थीं, वह सब दिखाने लगा। इन्द्रदत्त उसको देखकर, बड़ा खुश हुआ। उसे उसने अपना अंगरक्षक भी नियुक्त किया।

सुमित्र को दिया। पत्तों में से भी उसकी सुगन्ध आ रही थी।

सुमित्र ने वह पुष्प ले जाकर राजा को दिया और उससे कहा कि योगी स्वयं उससे मिलने एक सप्ताह में आ रहे थे। राजा ने उस तरह का पुष्प कभी न देखा था। उसकी सुगन्ध भी नयी थी। इसलिए वह उसको रह रहकर सूँघता।

अगले दिन राजा को सिर दर्द हो गया और वह रोज बरोज बढ़ता ही गया। चिकित्सा करवाई गई। पर कोई फायदा नहीं हुआ। राजा, बिस्तरे पर पड़ा कष्ट उठा रहा था।

योगी आकर एक सप्ताह बाद राजा से मिला। राजा के सिर दर्द के बारे में सुनकर उसने कहा—"राजा, यदि तुम्हें सिर दर्द हुआ है, तो भला क्यों नहीं होगा? क्या राज्य परिपालन मामूली बात है? यह सिर दर्द तो पहिले ही आना चाहिये था? चूँकि तुम्हारा मस्तिष्क बलवान है, इसलिए तुम्हें न हुआ था। कम से कम अभी एक बुद्धिमान व्यक्ति को मन्त्री बनाओ। सोचने के काम उसे सौंप दो और जो कुछ सोच विचार कर वह तुम्हें बताये, उसे करते जाओ।

उतनी तकलीफ़ थी, फिर भी उसने नाक भौं चढ़ाते हुए कहा—"एक की सलाह पर मैं भला क्यों राज्य करूँगा। वैसा नहीं होगा।" योगी ने हँसकर कहा—"मैं यह थोड़े ही कह रहा हूँ कि तुम किसी के कहने पर चलो" "तुम बुद्धिमान आदमी को देखकर, उसको अपनी बुद्धि उधार में दो" जैसे औरों से काम करवाते हो, वैसे उससे भी करवाओ। यदि तुमने ऐसा किया, तो कभी तुम्हें इस प्रकार का सिर दर्द नहीं होगा।

"मैं अपनी बुद्धि कैसे दूसरों को उधार में दे सकता हूँ?" राजा ने पूछा।

"वह मैं बताता हूँ। तुम यह बताओ कि तुम्हारी नजर में कौन बुद्धिमान है। मैं तुम्हारे मस्तिष्क की चिन्तन शक्ति उसके पास पहुँचा दूँगा।" योगी ने कहा।

राजा ने सुमित्र का नाम लिया, राजा की बुद्धि लेकर, सोचने के लिए सुमित्र भी मान गया। योगी ने अपनी शक्ति के कारण राजा को योग निद्रा में सुला दिया। उसने सुमित्र से कहा—"जो मैंने पुष्प दिया था, उसके कारण राजा को यह दर्द हुआ है। परन्तु जब वह इस नीन्द से उठेगा, वह चला जायेगा। अब से तुम मन्त्री बनकर, राजा से धर्म के अनुसार शासन करवाओ।"

राजा जब नीन्द से उठा, तो वह जान गया कि उसका सिर दर्द चला गया था।

"अब मैं अच्छा हूँ। आराम से हूँ।" उसने योगी से कहा।

"हाँ....शासन के बारे में सोच-साचकर, तुम्हारा मस्तिष्क सूज गया था। उसमें से कुछ मैंने सुमित्र के पास पहुँचा दिया है। अब तुम्हें शासन के बारे में सोचने साचने की कोई जरूरत नहीं है। यह माथापच्ची सब सुमित्र कर लेगा।" योगी ने कहा।

धीरसिंह, सुमित्र को मन्त्री बनाकर, उसकी सलाह के अनुसार राज्य करने लगा। चूँकि बुद्धि में मन्त्री राजा के समान था, इसलिए वह राज कर्मचारियों में सब से ऊँचा समझा गया। इसलिए सब दुष्ट सत्ताधारी चेत गये। लोग सुख से रहने लगे।

राजा का मस्तिष्क

दण्डकारण्य में कभी भिन्न-भिन्न प्रान्तों के लोग, जंगलियों की तरह जीवन बिताते थे। उनको तब सभ्यता छू तक नहीं गई थी। परन्तु एक एक प्रान्त का एक एक राजा नियमित होने लगा और जीवन भी नियमित होने लगा।

उस समय दण्डामथ नामक प्रान्त में अराजकता ही फैली हुई थी। बलवान निर्बलों को खूब सताते। इसलिए मामूली लोग, कोई भी काम मामूली तौर पर नहीं कर पाते थे। चूँकि उनको यह विश्वास न था कि उनको उनकी मेहनत का फल मिल सकेगा।

दण्डामथ में सुमित्र नाम का एक बुद्धिमान व्यक्ति था। अपने देश की दुस्थिति देखकर उसे बड़ा दुःख हुआ। उसने देश के दुष्टों को बहुत समझाकर देखा, पर उन्होंने अपने तौर तरीके नहीं बदले। आखिर, सुमित्र जीवन से इस कदर ऊब गया कि वह जंगल में जाकर रहने लगा। जंगल में उसे एक योगी दिखाई दिया। वह जंगल में एक आश्रम बनाकर, योगाभ्यास कर रहा था।

सुमित्र ने योगी से परिचय कर लिया। उसने उससे पूछा कि देश में अराजकता हटाने के लिए क्या किया जाना चाहिए?

"धैर्यशाली, पराक्रमशाली व्यक्ति को चुनकर, यदि राजा बनाया गया और ज्ञानी, विवेकशील, धर्म परायण व्यक्ति को मन्त्री बनाया गया, तो तुम्हारा देश सुधरेगा।" योगी ने बताया।

सुमित्र अपने देश गया। वहाँ सबसे बलवान धीरसिंह से मिला। "यदि तुमने

भीष्मदेव
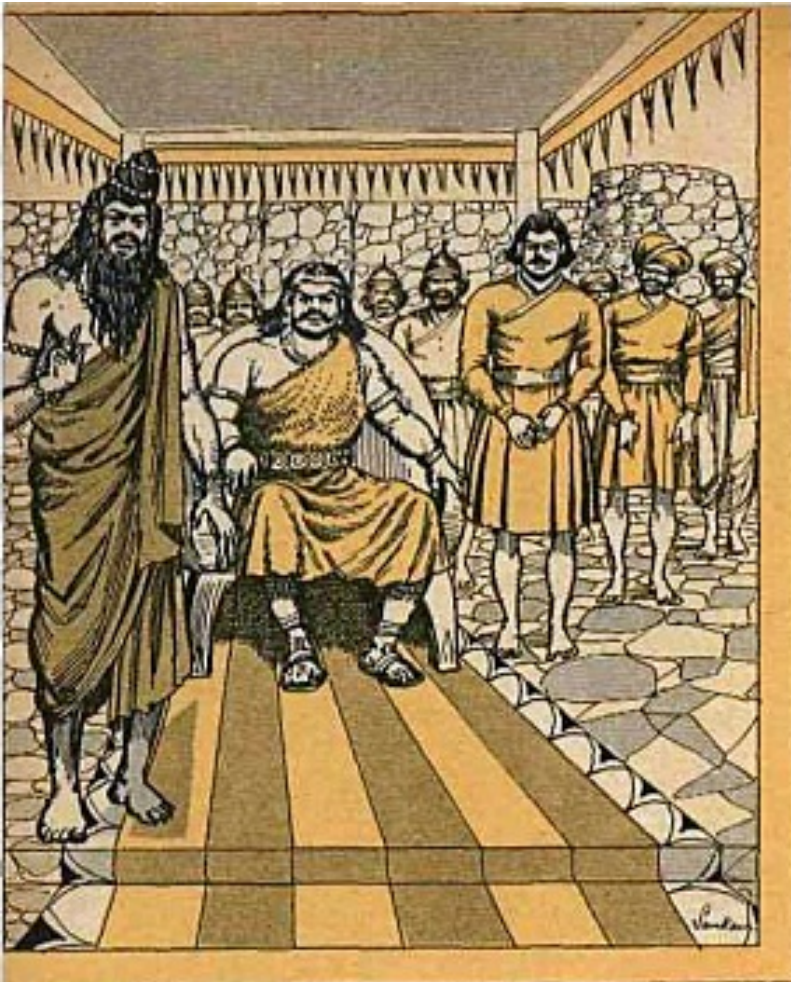
राजा होकर, सेना और कोश बनाकर, देश में हर किसी को आज्ञा देते हुए शासन किया, तो हमारे देश की हालत सुधरेगी।"

धीरसिंह सन्तोष के साथ इस काम के लिए मान गया। लोग भी यह जानकर खुश हुए कि उनकी रक्षा के लिए एक राजा था। धीरसिंह का राज्याभिषेक हुआ। योगी ने स्वयं अपने आश्रम में से आकर, उसका अभिषेक किया। उसने जाते हुए धीरसिंह को सलाह दी—"बुद्धिमान मन्त्री को नियुक्त करके, उसकी सलाह के अनुसार राज्य करो।"

परन्तु धीरसिंह ने उसकी सलाह की परवाह न की। "जब मैं ही राजा हूँ, मुझे सलाह देने के लिए किसी और आदमी की क्या ज़रूरत है? यदि शासन में कोई मन्त्री की सलाह सुने, तो इसका मतलब यही न हुआ कि राजा मन्त्री के नीचे हैं।" यह सोच, बिना मन्त्री के ही वह शासन करने लगा।

वे ही उद्धत बलवान, जो लोगों को सताया करते थे, अब राजा के यहाँ नौकरी करने लगे। पहिले की तरह जैसा जी में आता, वैसे लोगों को तंग करते, पर राजा को जैसे भी हो सन्तुष्ट रखते। लोग, राजा की आज्ञा का पालन कर रहे थे, फिर भी कोई फायदा न था। सुमित्र यह हालत देखकर, फिर एक बार योगी के पास गया, योगी ने कहा—"मैं, तुम्हारे राजा को ठीक करूँगा, एक सप्ताह में, मैं स्वयं आकर तुम्हारे राजा से मिलूँगा। पहिले यह पुष्प मेरी तरफ़ से राजा को भेंट में दो। इसको राजा के सिवाय किसी और को नहीं सूँघना चाहिए, नहीं तो अच्छा न होगा।" उसने एक पुष्प को पत्तों में लपेटकर,

"चलो, अपने सरदार के पास ले जायें?" दूसरे चोर ने कहा।

दोनों मिलकर, पन्नालाल को चोरों के सरदार के पास ले गये। पहिले चोर ने सरदार के कान में बताया कैसे पन्नालाल ने उसकी कभी सहायता की थी।

सब सुनकर, चोरों के सरदार ने पन्नालाल से कहा—"हमारे प्रान्त में जो आता है, उसको हम जीते जी वापिस नहीं जाने देते। परन्तु तुमने हमारी मदद की है, इसलिए हम तुम्हारा कुछ बिगाड़े ही तुमको वापिस जाने देते हैं—ठीक है न?"

"मैं आपका कृतज्ञ हूँ। परन्तु आप मेरा एक उपकार कीजिए। इन पहाड़ों में जो धनराशि है, वह मुझे दिखाइये, मैं वापिस जाकर राजा से उसके बारे में बताऊँगा। उसके बाद जो कुछ कार्यवाही करनी होगी, उसके बारे में इन्तज़ाम कर दूँगा।" पन्नालाल ने कहा।

"वाह! अब तक जो देखा है, उसके बारे में ही हमारी काली देवी के सामने खड़े होकर शपथ लेनी होगी कि किसी से न कहोगे—तभी तुम को जीते जी जाने देंगे।" चोरों के सरदार ने कहा।

"यदि आप मुझे न दिखाना चाहें, तो यहाँ के धन को ले जाकर, आप ही राजा के पास भिजवा दीजिए।" पन्नालाल ने कहा।

चोरों के सरदार ने गरमाकर कहा—"हम जो कमाते हैं, उसे किसी को नहीं देते? यदि तुमने यह सब किसी से न कहने की शपथ ली, तो हम तुम्हें काली को बलि दे देंगे।" उसने कहा।

"मैं ऐसी कोई शपथ नहीं कर सकता।" पन्नालाल ने कहा।

तुरत चोर, पन्नालाल के हाथ बाँधकर काली की मूर्ति के पास ले गये। वह

बड़ी ऊँची भयंकर मूर्ति थी। "कम से कम अब काली के सामने शपथ लो। जीवित छोड़ दिये जाओगे।" चोरों के सरदार ने कहा।

"मैं यहाँ पैसे के लिए आया हूँ, न कि तुम्हारे भेद की रक्षा करने।" पन्नालाल ने दृढ़तापूर्वक कहा।

पन्नालाल का सिर काटने के लिए चोरों के सरदार ने तलवार उठाई। उसी समय मूर्ति जैसे किसी ने धकेल दी हो, एक तरफ़ झुकी और फिर चोरों के सरदार पर जा गिरी। चोरों का सरदार, उसके नीचे कुचल गया और ठंडा हो गया।

"देखा? मुझे देवी ने ही इस काम पर भेजा है। उसने यह दिखाने के लिए कि तुम्हें, तुम्हारे सरदार की ज़रूरत नहीं है, उसकी बलि ले ली। लोगों को अकाल के कष्ट से बचाने के लिए, तुम्हारे धन की आवश्यकता है। जब यह बात मुझे देवी ने स्वप्न में बतायी थी, तभी मैं यूँ निकला था। मेरे साथ आओ—मेरा काम यह रहेगा कि राजा तुम्हें दण्ड न दें। यदि तुम सब साधारण लोगों से मिल-जुलकर रहे, तो देवी तुम्हारी रक्षा करेगी।" पन्नालाल ने चोरों को सलाह दी।

जिन चोरों ने पन्नालाल के धैर्य साहस को अपनी आँखों देखा था, उनको उसकी बातों पर विश्वास हो गया। वे सब अपना धन ढोकर, पन्नालाल के साथ राजा के पास गये। राजा ने सब चोरों को माफ़ कर दिया। उनके जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक व्यवस्था की। उस धन से अकाल हटाने का वह प्रयत्न करने लगा।

अकाल

पन्नालाल जिस देश में रह रहा था, उसमें अकाल पड़ा। न वर्षा हुई, न फसल ही। अकाल के निवारण के लिए राजा ने कुँये और गहरे करवाये। खज़ाने में जब तक धन रहा, उसने हर देश से अनाज मँगाकर लोगों में बाँटा। खज़ाना भी खाली हो गया।

उन्ही दिनों, एक दिन सवेरे पन्नालाल ने विचित्र सपना देखा। उसमें पन्नालाल राजा के सामने था और वह पूर्व के पहाड़ों की ओर संकेत करके कह रहा था "हमारा कुलदेवता कह रहा है कि इन पहाड़ों में कोई धनराशि है। हमने सैनिकों को भेजा, परन्तु एक भी वापिस न आया। लोग भूख से मर रहे हैं और हाथ पर हाथ रखे बैठना, बुरा मालूम होता है। उस धन के बारे में मालूम करके आनेवाला कोई भी नहीं है। क्या तुम यह काम कर दोगे?"

"क्यों नहीं, हुजूर! अभी होकर आता हूँ।" पन्नालाल कह ही रहा था कि उसकी नीन्द खुल गई। पन्नालाल को ऐसा लगा जैसे वह उठकर भी वही सपना देख रहा हो। उसने राजा के पास जाकर स्वप्न का वृत्तान्त कहना चाहा, पर उसने पहिले जानना चाहा कि सपना सच था कि झूट। इसलिए पन्नालाल बिना किसी से कहे घर से पूर्व की ओर निकल पड़ा। जब वह पहाड़ों के पास जंगलों में था, तो वहाँ के गाँवों में रहनेवालों ने उससे कहा कि उन पहाड़ों में कोई न जाता था और जो जाता था, वापिस न आता था। एक

बार उस तरफ़ सैनिक गये और फिरकर नहीं आये। यह सुनकर पन्नालाल ने सोचा कि सचमुच सपने में कुछ सचाई थी, उसका आगे जाने का निश्चय और भी दृढ़ हो गया।

ज्यों ज्यों वह आगे जाता जाता था, त्यों त्यों जंगल और घना होता जाता था। जब वह वहाँ चल रहा था, तो यकायक पन्नालाल को रास्ते में एक आदमी दिखाई दिया। "आप ही क्या पन्नालाल हैं?"

पन्नालाल ने उस आदमी को पहिचान लिया। वह आदमी एक चोर था, पहिले कभी पन्नालाल ने उसकी दवादारु की थी, उसे बचाया था। पन्नालाल ने उससे अपने स्वप्न के बारे में बताकर कहा—"लोग दाने दाने के लिए तरस रहे हैं। पहाड़ों में धन कहाँ है, यह मालूम करने में हमारी मदद करोगे?"

"यह तो सम्भव नहीं है। यह भयंकर प्रदेश है। यहाँ किसी को नहीं आना चाहिये। कृपा करके आप वापिस चले जाइये।" चोर ने कहा।

"एक ओर लोग हाय हाय कर रहे हैं, फिर मैं यह जानता हुआ भी कि यहाँ धन है, कैसे वापिस चला जाऊं?" पन्नालाल ने कहा।

"बाबू, इस तरह की दया और उदारता के लिए यहाँ जगह नहीं है। आप कृपा करके चले जाइये।" चोर ने कहा।

इतने में एक और आदमी कहीं और से आया। "कौन हो तुम? यहाँ किस काम पर आये हो? अरे हाथ पैर बाँधकर क्यों न इसे ले गये? यहाँ खड़े खड़े इससे क्या बातें कर रहे हो?" उसने चोर से कहा। वह भी चोरों के विरोध में था।

उससे पहिले चोर ने, उसके कान में पन्नालाल के बारे में बताया, फिर उसने पूछा—"क्या किया जाय?"

उस्मान कुछ न बोला। वह अयाशा को उसके कमरे में छोड़ आया और स्वयं कुछ सोचता सोचता अपने कमरे में सोने के लिए चला गया।

अगले दिन शाम तक जगतसिंह की हालत नाजुक ही रही। हकीम, उस्मान खान, अयाशा, उसके पास ही थे। हकीम ने आवश्यक औषधियाँ भी दीं। जब उन औषधियों ने काम करना शुरु किया, तो उसने कहा—"ज्वर कम हो रहा है, अब रोगी को कोई खतरा नहीं है।" यह सुनते ही अयाशा और उस्मान के मुँह खिल-से गये। हकीम चला गया। उस्मान खान भी सोने के लिए चला गया। अयाशा राजकुमार के पास थी।

आधी रात के बाद, जगतसिंह ने आँखें खोलीं। उसने अयाशा की शक्ल देखी। पर उसको देखकर लगता था, जैसे वह किसी को खोज रहा हो और उसको न पाकर दुःखी हो रहा हो।

काफ़ी देर बाद, उसने अयाशा से पूछा—"मैं कहाँ हूँ?"

"कतलू खान के किले में...." अयाशा ने जवाब दिया।

उसने कुछ देर सोचकर पूछा—"यहाँ क्यों हूँ?"

"आप ज्यादह बात न कीजिए। आपकी तबीयत ठीक नहीं है।"

"नहीं, नहीं, मैं यहाँ कैदी हूँ? तुम कौन हो?"

"अयाशा, कतलू खान की लड़की।"

"मैं यहाँ कितने दिनों से हूँ?"

"चार रोज से।"

"मन्धारण का किला क्या अब भी तुम्हारे कब्जे में है?"

"हाँ।"

"वीरेन्द्रसिंह का क्या हुआ?"

"वह कैद में है। आज ही उसकी सुनवाई है।"

जगतसिंह का मुँह कुम्हला-सा गया। "औरों का क्या हुआ?" उसने पूछा।

"वे सब बातें मैं नहीं जानती?" अयाशा ने घबराते हुए कहा।

राजकुमार कुछ गुनगुनाने लगा। उस गुनगुनाने में, उसने कई बार "तिलोत्तमा" का नाम सुना। वह उठ खड़ी हुई और दवाई लाकर उसे पिला दी।

"मैंने, जब जीवन और मृत्यु के बीच में था, एक सपना देखा। कोई देव कन्या मेरे सिरहाने पर बैठी मेरी सेवा कर रही है, वह तुम हो या तिलोत्तमा?" जगतसिंह ने पूछा।

"जो आपको सपने में दिखाई दी थी, वह तिलोत्तमा ही हो सकती है।" अयाशा ने कहा।

दुपहर बारह बजे, कतलूखान का दरबार खुला। उसी दिन वीरेन्द्रसिंह को सज़ा मिलनी थी। कुछ सैनिकों ने वीरेन्द्रसिंह को जंजीरों में बाँधकर कतलू खान के सामने खड़ा किया। वीरेन्द्रसिंह का मुँह जलता-सा लगता था, उसके मुँह पर कहीं भय की निशानी न थी।

कतलू खान ने शान्त होकर कहा—"वीरेन्द्रसिंह, इस दरबार में तुम्हारे अपराधों के बारे में सुनवायी होगी। पहिले यह बताओ कि तुमने हमारे विरुद्ध क्यों कार्य किया?"

"मैंने तुम्हारे विरुद्ध क्या क्या किया है, यह तुम ही पहिले बताओ।" वीरेन्द्रसिंह ने क्रुद्ध होकर कहा।

"ज़रा, सम्भल कर, अदब से बात करो।" एक दरबारी ने उससे कहा।

"मेरी आज्ञा के अनुसार, तुमने क्यों नहीं धन और सेना भेजी?" कतलू खान ने पूछा।

"तुम राजद्रोही हो। डाकू हो। मुझे क्यों तुम्हें धन देना चाहिए? सेना क्यों भेजनी चाहिए?" वीरेन्द्रसिंह ने निर्भय होकर पूछा।

दरबारी जान गये कि वह अपने ही हाथों अपनी मौत बुला रहा था।

कतलू खान गुस्से से काँपने लगा। फिर भी उसने अपने गुस्से को रोकते हुए कहा—"तुम हमारे शासन में हो, फिर भी तुम क्यों शत्रुओं की ओर मिल गये, बताओ?"

"कहाँ है तुम्हारे शासन और अधिकार?" वीरेन्द्रसिंह ने ज़ोर से पूछा। कतलू खान का क्रोध और भी उमड़ा।

"विश्वासघाती, सुनो, जल्दी ही तुम अपने कामों की सज़ा भुगतोगे। अभी तुम्हें प्राण बचाने का मौका है, पर तुम उस मौके को भी खो रहे हो।" कतलू खान ने कहा।

वीरेन्द्रसिंह ने ठट्टा मारकर कहा— "कतलू खान, मैं जँजीरों में जब तुम्हारे
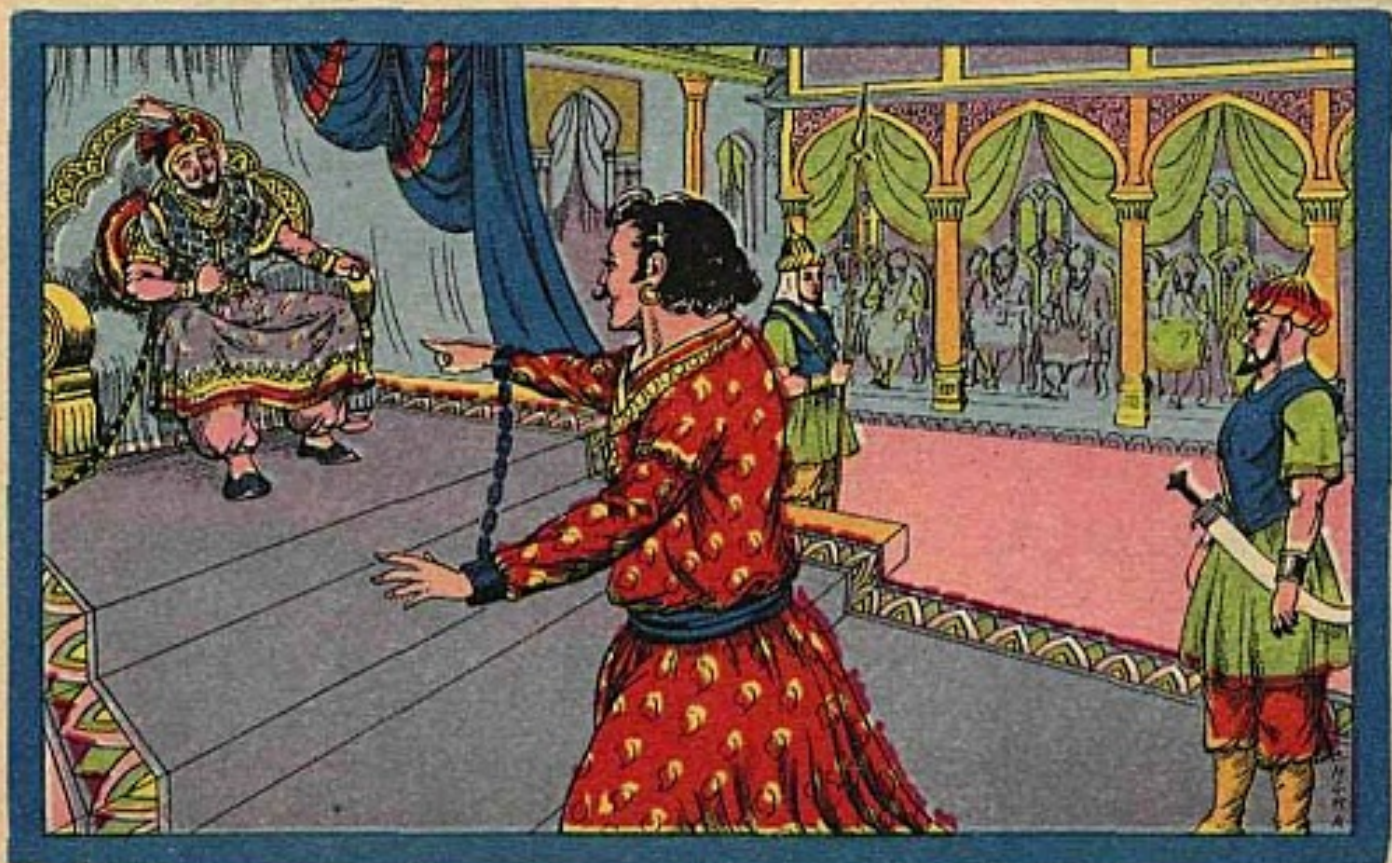
सामने पेश किया गया हूँ, तो इसलिए नहीं पेश किया गया हूँ कि मैं तुम्हारी रहम और तरस माँगूँ, जो तुम जैसे शत्रु की दया पर ज़िन्दगी बसर करे, उसका जीना न जीना बराबर है। मैं तुम्हें आशीर्वाद देकर, मर सकता था, पर तुमने तो मेरे बंश की जड़ ही उखाड़ दी है—मेरे लिए मेरे प्राण से भी अधिक...." कहते कहते उसका गला रुँध गया। आँखों से आँसुओं की धारा बह निकली। वह सिर नीचा करके रोने लगा।

कतलू खान क्रूर था। निर्भय था। दूसरों का दुःख देख, वह अविचलित होकर रह सकता था। स्वाभिमानी शत्रु को उस अवस्था में देखकर, उसके मुँह पर मुस्कराहट आ गई। उसने वीरेन्द्रसिंह से पूछा—"तुम मुझ से तो कुछ नहीं माँगने जा रहे हो? खूब सोचकर बात करो, तुम्हारा समय समीप आ रहा है।"

वीरेन्द्रसिंह ने सिर उठाकर कहा—"मैं तुमसे और कुछ नहीं चाहता। बस, मुझे जल्द से जल्द मरवा दो।"

"अच्छा....और कुछ कहना है।"

"नहीं, इस जन्म में और कुछ कहने को नहीं है।"

"मरने से पहिले, क्या अपनी लड़की को एक बार नहीं देखोगे?"

वीरेन्द्रसिंह की आँखें फिर भर आयीं। उसी समय उनमें से अंगारे भी बरस पड़े। "यदि मेरी लड़की मरी नहीं है, तो मैं उसको देखना नहीं चाहता, यदि वह मर गई हो, तो दिखाओ, मैं उसको अपनी गोद में बिठाकर, मर जाऊँगा।" उसने कहा।

[अभी है]

परीक्षा का फल

केकय देश के वितस्ता नदी के किनारे प्रज्ञामति नाम का एक राजा रहा करता था। उसके जागीरदारों में धर्मपाल नाम का एक महावीर भी था। धर्मपाल की जल्दी ही मृत्यु हो गई थी, इसलिए उसका लड़का शूरपाल बारहवीं वर्ष की उम्र में ही, जागीर का वारिस बना। उसकी जागीर की देख भाल करनेवाला कोई न था। उसकी जागीर से राजा को कई साल कर नहीं पहुँचा।

जब राजा को मालूम हुआ कि धर्मपाल की जागीर से सात आठ वर्ष से कर नहीं मिल रहा था, तो उसने शूरपाल के पास खबर भिजवाई। जब यह पता लगा कि यदि उसने एक महीने के अन्दर राजा के दर्शन न किये, तो जागीर किसी और की हो जायेगी, तो शूरपाल अपने एक मित्र क्षेमवर्मा के साथ बीस आदमियों को लेकर, राजधानी के लिए निकल पड़ा।

शूरपाल की जागीर बड़ी अच्छी थी। उसमें सोना तो उपजता ही था और सभी प्रकार के धान्य भी उपजते थे। यह जानकर राजा के छोटे लड़के ने एक गन्दी चाल सोची। शूरपाल को यदि रास्ते में ही खतम कर दिया गया, तो वह राजा का दर्शन न कर सकेगा। यह जानकर कि उसने राजाज्ञा का उलंघन किया है, राजा उसकी जागीर ले लेगा। तब वह राजा को मनाकर, उस जागीर को स्वयं ले सकेगा। उसने यही बात मन्त्री के लड़के से, जो उसका मित्र था, मनवायी। वह कुछ सैनिकों को लेकर राजधानी से कुछ दूर, शूरपाल के

मदनमोहन

मार्ग में, जंगल में छुपकर बैठ गया। सैनिकों को, पेड़ों के पीछे छुपाकर, राजा का लड़का और मन्त्री का लड़का घोड़ों पर सवार होकर, सड़क को रोककर खड़े हो गये।

घोड़े और योद्धाओं को थोड़ी दूर पर देख, क्षेमवर्मा ने सोचा कि ज़रूर कुछ दाल में काला था। उसने शूरपाल को और उसके लोगों को पीछे रहने के लिए कहा और स्वयं अपने घोड़े को आगे ले गया। यह सोच कि वह ही शूरपाल होगा, राजा के लड़के ने रास्ता रोककर कहा—"जरा घोड़ा रोको।"

"रास्ता दो....मुझे जाना है...." कहता क्षेमवर्मा ने राजकुमार को हटाकर, आगे जाने का प्रयत्न किया।

"अरे....इतना घमंड...." राजकुमार ने उसको घोड़े पर से धक्का दिया।

तुरत शूरपाल अपने घोड़े को तेज़ी से दौड़ाता आया। "अरे....निहत्थे पर हाथ उठा रहे हो, शर्म नहीं आती।" उसने राजकुमार को फटकारा।

"पहिले तुम अपनी हालत सम्भालो।" राजकुमार ने शूरपाल पर तलवार उठायी। इतने में शूरपाल की तलवार ने राजकुमार के सिर को काट दिया। वह न जानता था कि शूरपाल असाधारण योद्धा था।

मन्त्री का लड़का यह देखकर घबरा गया और पेड़ों के पीछे सैनिक भी ऐसे खड़े रहे, जैसे उन पर बिजली गिर गई हो। शूरपाल ने अपने मित्र क्षेमवर्मा को उठाया। अपने लोगों को बुलाया और सीधे राजधानी में पहुँचा। उसने राजा के दर्शन करके कहा—"आपकी राजधानी के पास ही, डाकू खुल्लमखुल्ला घूम फिर रहे हैं। एक धूर्त ने मुझे मारने की कोशिश की। मेरे मित्र को घोड़े पर से बिना

किसी वजह के धकेल दिया और मैंने इसलिए उसका गला काट दिया।"

"अच्छा काम किया, ऐसे लोगों को इसी तरह सज़ा दी जानी चाहिए।" राजा ने कहा।

इतने में मन्त्री के लड़के ने राजकुमार के शव को राजा के सामने रखकर कहा—"महाराज, यह भी क्या जबरदस्ती है, इस नीच ने जंगल में यूँहि राजकुमार पर हाथ उठाया और उनको आत्मरक्षा का भी मौका न दिया और उनका सिर काट दिया।"

राजा को बहुत दुःख और क्रोध एक साथ आया। जो लड़का मर गया था, उस पर राजा को बड़ा प्रेम था। इसलिए तलवार निकालकर, शूरपाल का गला काटने के लिए वह तैयार हो गया। परन्तु दरबारियों ने कहा कि यों जल्दबाजी दिखाना ठीक न था, यह देखना उचित था कि शूरपाल क्या कहता है। उन्होंने राजा को रोका।

"मैं उनसे यूँ ही न भिड़ पड़ा था। पहिले आपके लड़के ने ही मुझ पर वार किया था। मुझे यह भी न मालूम था कि

शूरपाल की उम्र अभी बीस वर्ष की भी पूरी न हुई थी। मन्त्री का लड़का तीस वर्ष का था और हट्टा कट्टा था। राजा ने सोचा कि उसके हाथ अवश्य शूरपाल की मृत्यु हो जायेगी और इस तरह उसका बदला निकल जायेगा। परन्तु शूरपाल में जितनी फ़ूर्ति थी, उससे आधी भी मन्त्री के लड़के में न थी। जब दोनों तलवार लेकर कुछ देर लड़े, तो मन्त्री का लड़का भी राजकुमार से मिल गया, मर गया।

"महाराज, अब कम से कम इस बात को छोड़िये। आपके कथनानुसार यह सिद्ध हो गया है कि यह लड़का निर्दोष है।" मन्त्रियों ने कहा। परन्तु राजा का क्रोध शूरपाल पर अधिक ही हुआ, कम न हुआ। उसको मरवाने के लिए उसने एक और चाल सोची।

"मैं इसको क्षमा करता हूँ, पर इसको पहिले मेरा बताया हुआ एक काम करके आना होगा। इसे कुशान सम्राट के राज्य में जाना होगा। उसके राज्य के मुख्य अतिथि को मारकर, सम्राट के किरीट को लाकर मुझे देना होगा। यदि इसने यह काम किया, तो इसे माफ करने में मुझे

वे कौन हैं? आपके मन्त्री का लड़का सफेद झूट बोल रहा है। जब मैं आपके दर्शन के लिए आ रहा था, तो भला रास्ते में ख्वाहमख्वाह यूँ मार पीट मोल लेने से क्या बनता है?" शूरपाल ने कहा।

परन्तु राजा के कान में, जो क्रोध से उबला जा रहा था, एक बात भी न गई।

"हमें कैसे मालूम हो कि तुम झूट बोल रहे हो, या मन्त्री का लड़का बोल रहा है? यह तो भगवान ही जानते हैं। तुम दोनों द्वन्द्वयुद्ध करो, जो जीत जायेगा, वह ही सच्चा सावित होगा।" राजा ने कहा।

कोई आपत्ति नहीं है।" राजा ने इस प्रकार कहा कि सब उसकी दुष्टता ताड़ गये और सब अचरज से देख रहे थे कि शूरपाल ने कहा—"यदि यही आपकी आज्ञा है, तो मैं ऐसा ही करूँगा।" वह सभा से निकल गया।

उसने क्षेमवर्मा और अपने लोगों को राजधानी में छोड़ दिया। कुशान राजा की राजधानी की ओर अकेला निकल पड़ा। यात्रा तो लम्बी थी ही, दुर्घटनापूर्ण भी थी। सम्राट के नगर के पश्चिम की ओर पहाड़ी, घाटियों में राक्षस रहा करते थे। शूरपाल ने उन घाटियों में से जाते हुए, राक्षसों के राजा ताम्राक्ष से युद्ध किया, अपनी चतुरता से उसे मार दिया, उसके हाथ के सोने का कँकण लेकर, वह सम्राट के नगर में पहुँचा।

शूरपाल जब कुशान नगर में गया, तो वह वैभव के कारण चमचमा रहा था, चूँकि उसी दिन सम्राट की लड़की मँगली का विवाह हो रहा था। राजमहल में सम्राट, बन्धु, मित्रों के साथ बैठा था। उसके एक ओर उसकी लड़की थी और दूसरी ओर, उससे शादी करनेवाला लड़का था। शूरपाल
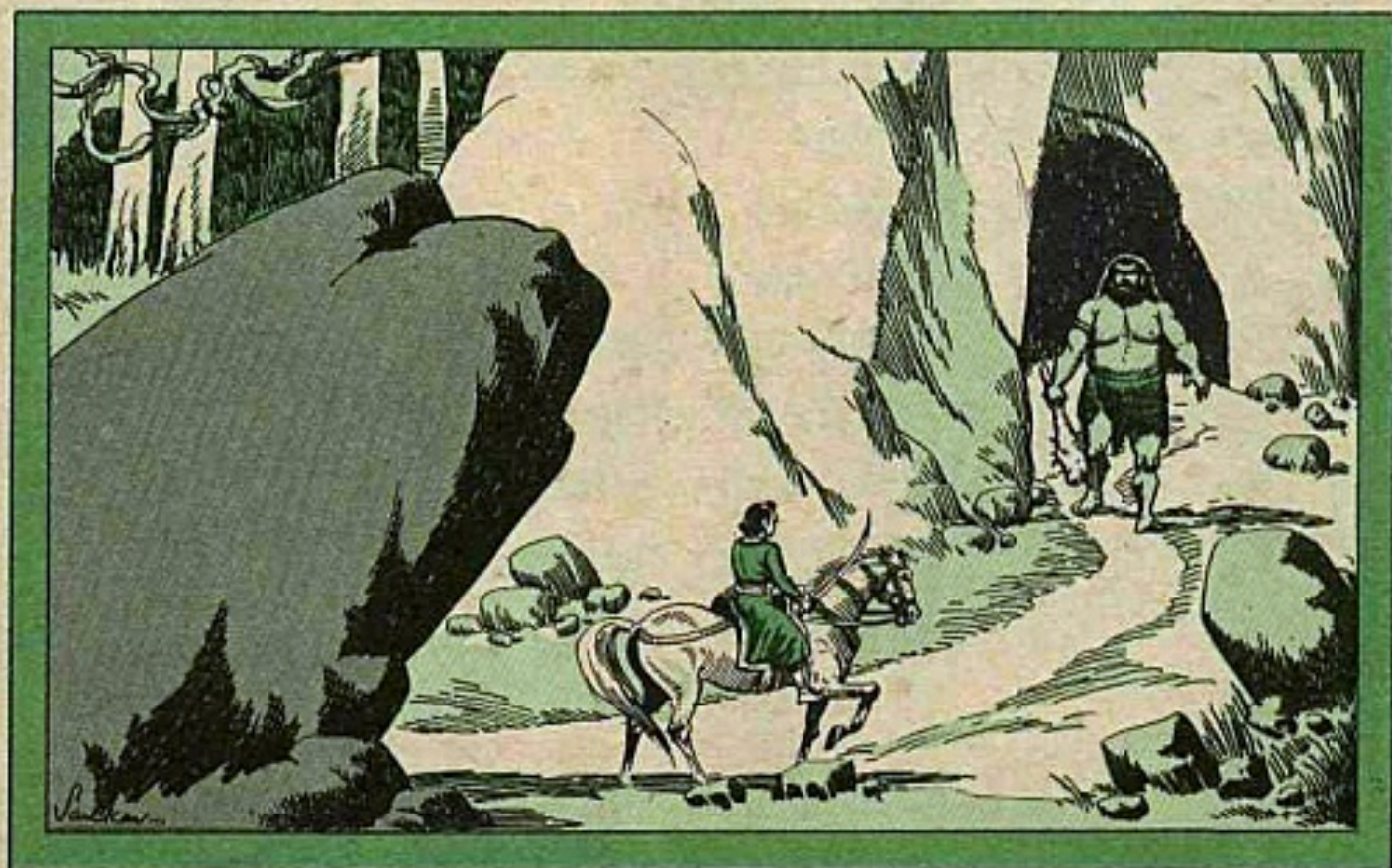
सीधे राजा के पास गया। उसने झुककर उसको प्रणाम किया—"यह राजा की आज्ञा है।" यह कहकर, उसने तलवार निकालकर, दुल्हे का सिर काट दिया।

अतिथियों में हाहाकार मच गया। सम्राट के मुख से कुछ देर तक बात न निकली। राजमहल में हो हल्ला मच गया। सिर्फ़ मँगली ने ही सन्तोष की साँस ली—चूँकि वह उस आदमी से बिल्कुल शादी न करना चाहती थी। वह निरा, जंगली और क्रूर था। उसमें लेशमात्र भी मानवीयता न थी।

"इस दुष्ट को पकड़ो।" सम्राट चिल्लाया।

"महाराज, मुझे माफ़ कीजिए। मैं आपका बुरा सोचकर नहीं आया हूँ—मैं अपने राजा की आज्ञा का पालन कर रहा हूँ। यदि आपने अपना मुकुट दिया, तो जिस काम पर मैं आया था, वह भी हो जायेगा और मैं अपने रास्ते चला जाऊँगा। फिर आपको अपना मुँह न दिखाऊँगा।" शूरपाल ने विनयपूर्वक कहा।

यह सुन, सम्राट का शान्त होना तो अलग, वह और क्रुद्ध हो उठा। "इस पगले को काली कोठरी में डाल दो और भूख और प्यास से इसे मरने दो।"

"मुझे मामूली आदमी न समझो। मैंने राक्षस राजा ताम्राक्ष को मार रखा है। यह देखो उसका कँकण, जो मैं उसके शव से उतार लाया था।" शूरपाल ने कहा। इसे भी सम्राट ने अनसुना कर दिया।

सम्राट की आज्ञा के अनुसार, उसके नौकरों ने शूरपाल को पकड़ लिया और उसे काली कोठरी में डाल दिया और ऊपर से ताला लगा दिया।
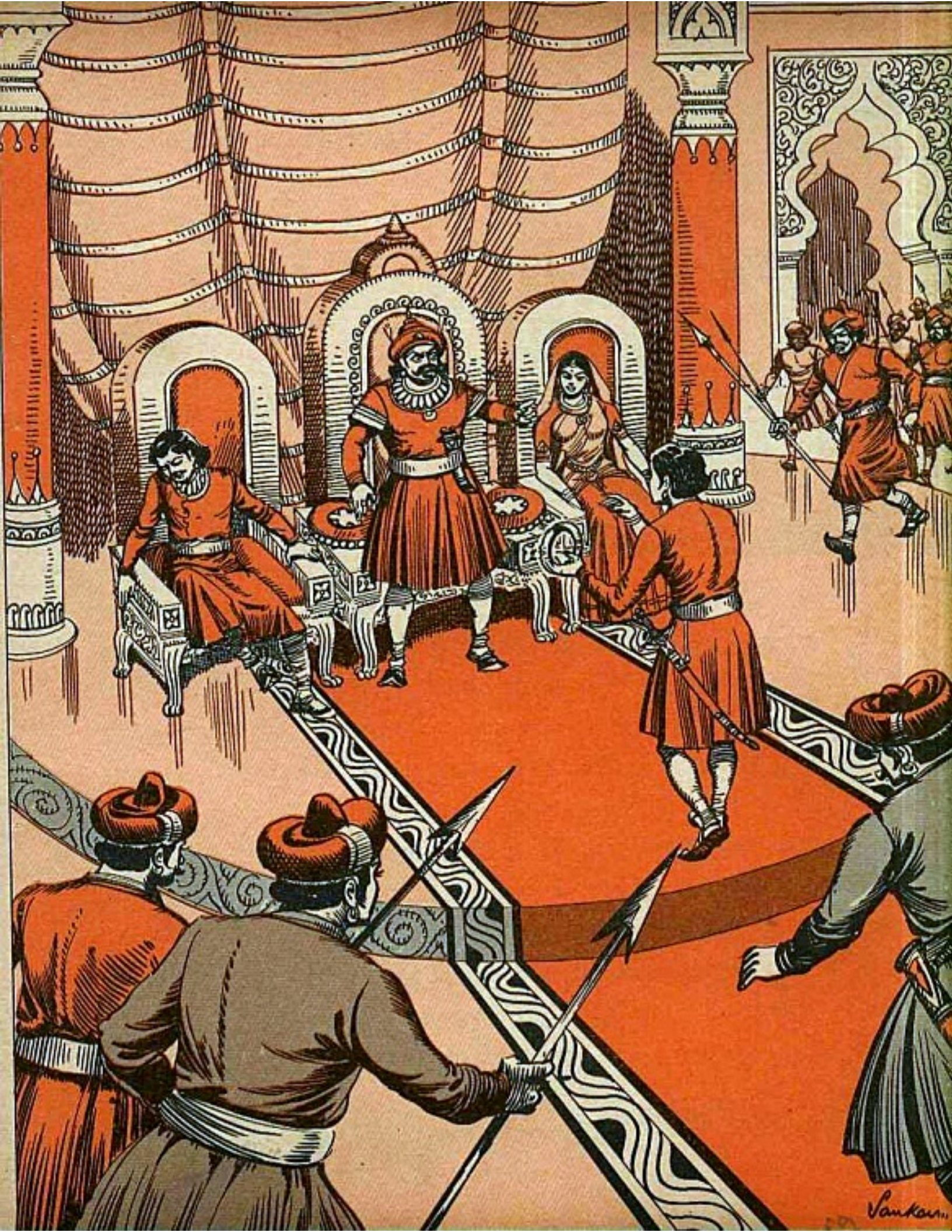
Sankar
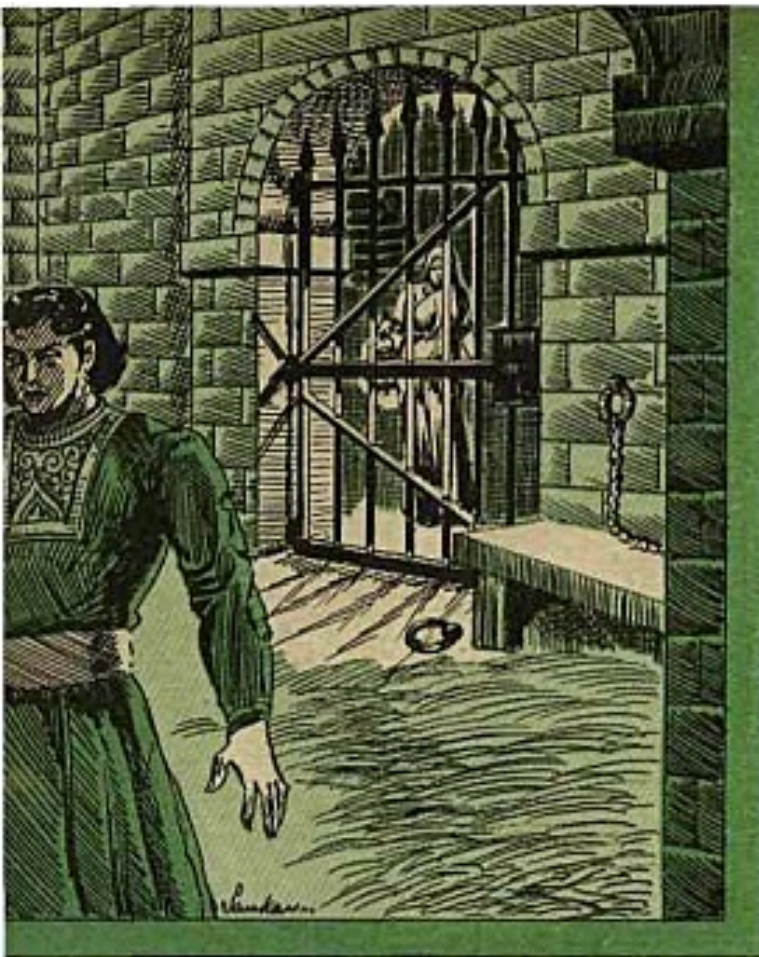
वह दिन और अगला दिन भी गुज़र गया। शूरपाल बिना खाने-पीने के गाढ़ अन्धकार में, सख्त फर्श पर लेटकर सोचने लगा—"लगता है, अब मेरा इस संसार में काम खतम हो गया है। उसके लड़के को मारने के कारण, प्रज्ञामति महाराजा ने मुझ से अच्छा बदला निकाल लिया है।"

परन्तु यकायक उस अन्धकार में भी आशा की रेखा दीखने लगी। कोई दीया हाथ में लेकर, उसकी काली कोठरी में आयी। शूरपाल ने सम्राट की लड़की मँगली को पहिचान लिया।

"तुम्हारे लिये भोजन और पानी लायी हूँ। जेल के अधिकारी को मैंने घूँस देकर, अपनी ओर कर लिया है। उसका विश्वास किया जा सकता है।" मँगली ने शूरपाल से कहा।

उसके बाद, रोज रात को मँगली उसके लिए खाने-पीने को लाती। दोनों आपस में बातें किया करते। सम्राट की लड़की ने कृतज्ञता दिखाई क्योंकि उसने, एक क्रूर से शादी करने से बचा लिया था। शूरपाल ने भी कृतज्ञता दिखाई क्योंकि उसने, उस काली कोठरी में भूख और प्यास से उसे मरने नहीं दिया था। परन्तु उस काली कोठरी से बाहर कैसे निकला जाये, न वह जानती थी, न शूरपाल ही।

एक महीने बाद, जेल के अधिकारी ने सम्राट के पास जाकर कहा—"महाप्रभु, पगला मर गया है।"

"पिंड छूटा।" सम्राट ने सन्तोषपूर्वक कहा।

इसके कुछ दिन बाद, सम्राट पर बड़ी आफत आ पड़ी। पता लगा कि शूरपाल के हाथ से मारे गये ताम्राक्ष का भाई धूम्राक्ष, सम्राट पर हमला करने आ रहा था।

सम्राट घबराया। राक्षसों से वैर मोल लेना ठीक न था।

"ताम्राक्ष को मारनेवाला अगर वह लड़का होता, तो धूम्राक्ष की खबर लेता।" मँगली ने पिता से कहा।

"सच है, पर वह तो काली कोठरी में भूख और प्यास से मर मरा गया है।" सम्राट ने कहा।

मँगली ने अपने पिता के पैरों पर पड़कर, पहिले ही उससे माफ़ी माँगकर, कहा—"वह मरा नहीं है। मैं रोज उसके पास खाना पहुँचा देती थी। यदि उसे कैद से छोड़ दिया गया, तो वह इस धूम्राक्ष से लड़ेगा।"

सम्राट की जान में जान आयी। राक्षस विचित्र लोग हैं। उनमें एक भी, किसी और से लड़ता मारा गया, तो वे सब भूल जाते हैं। यदि एक राक्षस को मारने के लिए, घाटी में सेना भेजी गई, तो सब राक्षस आकर, मिलकर, राजधानी को घेर लेंगे।

सम्राट ने तुरत कैद को आदमी भेजा। शूरपाल को बुलाया। "जो तुम्हारे हाथ राक्षस मारा गया था, उसका भाई हम पर हमला करने आ रहा है। यदि तुमने उससे जाकर युद्ध किया, तो मैं अपना मुकुट तो दूँगा ही साथ अपनी लड़की का विवाह भी तुमसे कर दूँगा।"

"मैं इसके लिए तैयार हूँ।" शूरपाल ने कहा।

वह जाकर, धूम्राक्ष से लड़ा। उसने अपनी गदा मारने के लिए उठायी ही थी कि शूरपाल ने उसकी छाती में अपनी तलवार घुसेड़ दी और उसे मार दिया।

शूरपाल ने सम्राट के पास आकर कहा—"मैंने आपका काम पूरा कर

दिया है। अब आप अपना वचन निभाइये।"

"तो मैं जीता जी तुमको छोड़ देता हूँ। जाओ।" सम्राट ने कहा। चूँकि अब उसे राक्षसों का भय न था।

"आपने कहा था कि आप अपना मुकुट मुझे दे देंगे और अपनी लड़की की शादी मुझसे करेंगे।" शूरपाल ने कहा।

"यदि तुरत न चले गये, तो समझ लो, मैं फिर तुम्हें काली कोठरी में डाल सकता हूँ। ज़रा सम्भल कर बात करो।" सम्राट ने कहा।

शूरपाल को बड़ा गुस्सा आया। उसने तलवार निकाली और सम्राट का गला काट दिया। राजकर्मचारियों ने शूरपाल को दण्ड देना चाहा। परन्तु सम्राट के मरते ही उसकी उत्तराधिकारिणी मँगली ने कहा—

"यह निरपराधी हैं। यही नहीं, मेरे होनेवाले पति भी हैं—तुम सब को इनका आज्ञाकारी होना होगा।"

शूरपाल ने मँगली से विवाह कर लिया। उसने राज्याभिषेक भी कर लिया। उस समय और राजाओं के साथ, केकय देश के प्रज्ञामति ने भी आकर, नये सम्राट को बधाई दी।

"महाराज, आपके बताये हुए मैंने दोनों काम कर दिये। सम्राट का मुकुट अब मेरे सिर पर ही है। क्या हुक्म है आपका?" शूरपाल ने प्रज्ञामति से पूछा।

प्रज्ञामति ने काँपते हुए, उसके पैरों पर पड़कर माफ़ी माँगी।

"इस बार माफ़ करता हूँ। अब कभी किसी और की, बिना सोचे विचारे परीक्षा न लीजिए।" शूरपाल ने कहा।

* सात घोड़े *

बहुत समय पहिले एक जंगल के पास एक गरीब परिवार रहा करता था। पति, पत्नी और दोनों लड़के खून पसीना एक करते, पर उनको पेट भर खाना नहीं मिलता। कपड़ों का तो कहना ही क्या?

"छी....इस तरह जीने से तो यही अच्छा है कि गाँव गाँव भीख माँगकर जिया जाये।" यह सोचकर बड़ा लड़का सवेरे निकल पड़ा और अन्धेरा होते होते चलकर एक राजमहल में पहुँचा।

महल के सामने राजा स्वयं सीढ़ियों पर खड़ा था। उसे देखकर उसने पूछा—"तुम कौन हो? कहाँ जा रहे हो?"

"एक जगह तो नहीं, जहाँ पेट भर खाना मिल जाये वहीं।" गरीब के बड़े लड़के ने कहा।

"यानि तुम काम चाहते हो। क्या मेरे सातों घोड़ों को चराओगे? तुम्हें अलग तनख्वाह नहीं दूँगा। दिन भर घोड़ों के साथ घूमो, शाम आकर मुझे बताओ कि घोड़ों ने क्या खाया है और क्या पिया है। यदि सच बताया, तो मैं अपनी लड़की की तुम्हारे साथ शादी कर दूँगा। यदि झूट बोला, तो पीट पीटकर मार दूँगा।" राजा ने कहा।

गरीब के बड़े लड़के को यह कोई बड़ा काम नहीं लगा। उसे इतना आनन्द हुआ मानों वह राजा का दामाद बन गया हो। "आप अपने घोड़ों को चराने के लिए मुझे रख लीजिए।" उसने कहा।

अगले दिन सवेरा होते होते वह अस्तबल में गया। नौकर ने तभी सात घोड़े छोड़े थे। बाहर आते ही वे बाण की

तरह बाहु की ओर भागे। गरीब का लड़का भी ज़ोर से उनके पीछे भागा।

घोड़े बिना कहीं रुके, पहाड़ों की ओर भागे। भागते भागते उनकी रफ्तार भी बढ़ती जाती। जहाँ देखो वहाँ हरी घास थी, पर कहीं वे उसे चरने के लिए नहीं रुके।

जब वह पहाड़ों के पास आया, तो गरीब का बड़ा लड़का आगे भाग न सका। उसका सारा शरीर पसीने से तरबतर हो गया था। भागते भागते दम फूल गया था। पैर लड़खड़ाने लगे थे। पहाड़ के नीचे एक झोंपड़ी में एक बुढ़िया चरखा चला रही थी। "आओ, बेटा, आओ.... तुम्हारा पसीना पोंछे देती हूँ।" उसने उसको प्रेम से बुलाया। उसने आश्चर्य में पड़कर जब बुढ़िया की ओर देखा, तो घोड़े कहीं चले गये थे।

यह सोच कि वह उनको न पकड़ सकेगा। गरीब का बड़ा लड़का, बुढ़िया की झोंपड़ी में घुसा।

बुढ़िया ने उसके शरीर का पसीना पोंछा। उस पर पंखा किया। उसने बाल संवारे। कुछ आराम लेने के बाद उसने उठकर कहा—"अब मैं सीधे अपने घर जाऊँगा। राजमहल जाना व्यर्थ है। जाऊँगा, तो राजा पूछेंगे कि घोड़ों ने क्या खाया, क्या पिया? यदि बता न पाऊँगा, तो खूब पीटेंगे। चोट क्यों फिजूल खायी जाये?"

"अरे, इतनी-सी बात पर क्यों डरते हो? घोड़े घास खाकर पानी पीते हैं। राजा से यही कहना।" बुढ़िया ने उसे सलाह दी।

शाम को घोड़ों के वापिस आने तक गरीब का बड़ा लड़का, बुढ़िया के झोंपड़े में ही रहा। उनके पीछे पीछे वह राजमहल गया।

उसको देखते ही राजा ने पूछा—"क्या घोड़ों को ठीक तरह चराया था? उन्होंने क्या खाया था? क्या पिया था?"

"घास खाकर, पानी पिया था।" गरीब के बड़े लड़के ने कहा।

"इसे खूब पीटकर, भेज दो।" राजा ने गुस्से में अपने सैनिकों से कहा।

बुढ़िया की सलाह सुनने के कारण, गरीब का बड़ा लड़का इतना पीटा गया कि लहू-लुहान होकर, मरता जीता, वह घर वापिस गया।

बड़े लड़के के घर आते ही छोटा लड़का भी, यह कहकर घर से निकल पड़ा कि वह अपना पेट खुद पालेगा। वह भी दिन-भर चलकर, शाम के समय राजा के महल में पहुँचा। राजा ने उससे भी घोड़े चराने के लिए कहा और वे क्या खाते हैं, क्या पीते हैं, यह बताने के लिए कहा—यदि उसने झूट बोला, तो उसको भी पिटवाया जायेगा। छोटा लड़का इसके लिए मान गया। अगले दिन सवेरा होते होते घोड़ों को छोड़ा गया, वे भागने लगे। छोटा लड़का उनके सामने भागता-भागता कहता गया—"आओ, मुझ से आगे-आगे भागने की बाज़ी मारो।"
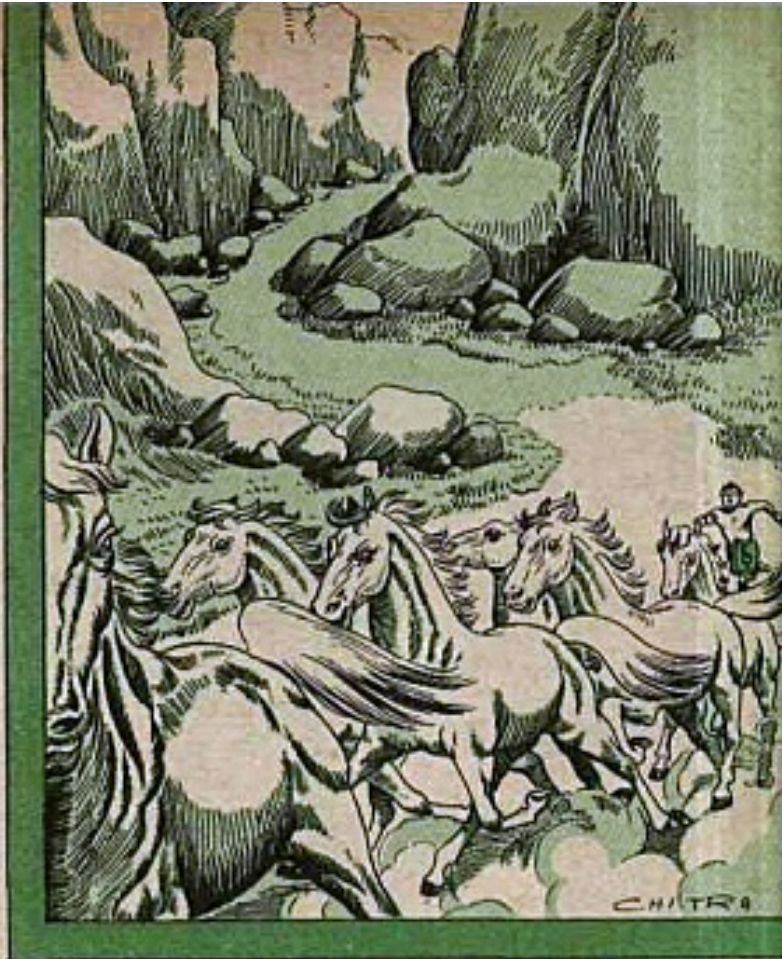
घोड़े जब पहाड़ों के पास गये, तब भी वह दौड़ रहा था। उसके शरीर से पसीने की धारायें बह रही थीं, पर उसने भागना न छोड़ा। इतने में वह बुढ़िया की झोंपड़ी के पास पहुँचा।

"आओ बेटा, पसीना पोंछे देती हूँ।" उस बुढ़िया ने उसे बुलाया।

"तभी न, जब मैं तुम्हारे पास आऊँगा।" कहकर, वह भागता गया।

पर वह थक रहा था, तब तक वह घोड़ों के साथ भाग रहा था, पर अब घोड़े उससे आगे भागते लगते थे। सबसे पीछे

के घोड़े के गले के बाल उसने पकड़े और उछलकर उसकी पीठ पर सवार हो गया।

वे घोड़े दौड़ते-दौड़ते, एक घने जंगल में एक मन्दिर के पास जाकर रुके। यह सोचकर कि उनको वहीं पहुँचना था। छोटा लड़का घोड़े पर से उतरा, मन्दिर के प्राँगण की ओर चला।

घोड़ों ने एक एक करके, मन्दिर के प्राँगण में पैर रखा और पैर रखते ही वे सुन्दर युवक हो गये। यह आश्चर्यजनक परिवर्तन देखते ही छोटा लड़का चकित रह गया।

उन युवकों में से बड़े ने, गरीब के छोटे लड़के को पास बुलाकर, अपनी कहानी यूँ सुनाई।

"हम सातों राजा के लड़के हैं। हमारे पिता ने तुम्हारे साथ, हमारी बहिन की शादी करने के लिए भी कहा है। रास्ते में, जिस बुढ़िया ने तुम्हें बुलाया था, वह बड़ी जादूगरनी है। उसी ने अपनी मन्त्र शक्ति से हमारी यह हालत कर रखी है। उसका मन्त्र इस मन्दिर के प्राँगण में काम नहीं करता। इसलिए हम दिन में जब तक सम्भव हो, तब तक मनुष्य के रूप में रहते हैं। मनुष्यों का भोजन करते हैं। मनुष्य जो पीते हैं, वहीं पीते हैं। हम जो खायेंगे और जो पीयेंगे, वह चूँकि तुम देखोगे और यह बात हमारे पिताजी से कहते ही, वे हमारी बहिन से तुम्हारी शादी कर देंगे। उसके बाद, तुम हमारा एक उपकार करो। इस मन्दिर के अन्दर एक तलवार है। यह जादूभरी तलवार है। तुम उसे लेकर, हमारे साथ, हमारे अस्तबल में शाम को आओ और जब हम वहाँ बँधे हुए हो, तब हमारा सिर काट देना। ऐसा करने से हमारा घोड़े का

रूप चला जायेगा और हम हमेशा के लिए मनुष्य हो जायेंगे।"

यह कहकर, बड़े राजकुमार ने गरीब के छोटे लड़के को मन्दिर में ले जाकर, उसे एक कोने में, तलवार दिखाई। छोटा लड़का, उसको दोनों हाथों से भी आसानी से उठा न सका।

मन्दिर में एक छोटा गढ़ा-सा था। उसमें जादू का पानी था। राजकुमार ने उसको तीन बार पीने के लिए कहा। तीन घूँट पीते ही, छोटे लड़के ने आसानी से एक ही हाथ से उस तलवार को पकड़ लिया।

फिर राजकुमारों ने मन्दिर के प्राँगण में भोजन पकाया। भोजन के लिए सभी आवश्यक चीज़ें, मन्दिर में एक ओर रखी थीं।

राजकुमारों के साथ, छोटे लड़के ने भी भोजन किया।

सूर्यास्त तक उन सबने मन्दिर में ही विश्राम किया। फिर वे घर की ओर निकले। मन्दिर से ज्योंहि वे बाहर आये, वे पहिले की तरह घोड़े हो गये। गरीब का छोटा लड़का तलवार लेकर, एक घोड़े पर सवार हो गया।

जब वह घोड़ों के साथ वापिस आया, तो बुढ़िया ने उसकी ओर यूँ देखा, जैसे अंगारे बरसा रही हो। उसे डराया। जब छोटा लड़का महल में पहुँचा, तो राजा ने पूछा—"क्या ठीक घोड़ों को चराया था?"

"जब मैं चराने के लिए मान गया था, तो क्या बिना चराये रहूँगा?" छोटे लड़के ने कहा।

"उन्होंने क्या खाया और क्या पिया था?" राजा ने फिर पूछा।

"मनुष्य जो खाते हैं, उन्होंने भी वही खाया और मन्त्र जल पिया।" छोटे ने जवाब दिया।

"अरे, यह कहने के लिए, एक भी नहीं रह गया था। जैसा मैंने कहा था, वैसे तुम्हें अपनी लड़की देकर, मैं तुम्हें अपना दामाद बना लूँगा।" राजा ने कहा।

उस दिन रात को सबके सोने के बाद, छोटा लड़का तलवार लेकर, अस्तबल में गया। पर घोड़ों का सिर काटने के लिए उसका हाथ न उठा। आखिर उसने साहस करके, एक घोड़े का सिर काट ही दिया। तुरत उसके स्थान पर एक राजकुमार खड़ा हो गया। उसके बाद, उसने हिम्मत करके सब घोड़ों के सिर काट दिये। सातों राजकुमार मन्त्रों के प्रभाव से मुक्त हो गये।

राजा इस प्रकार सन्तुष्ट हुआ, जैसे फिर उसके सात बच्चे हो गये हों। राजकुमारी अपने भाइयों को इतने समय बाद देख, आनन्द के अश्रु बहाने लगी। उसका, छोटे लड़के के साथ विवाह निश्चय हुआ। छोटे ने अपने माँ-बाप और बड़े भाई को भी बुलाकर, राजमहल में रखा। धूम-धाम से विवाह हुआ और सब सुख से रहने लगे।

विभीषण ने कुम्भकर्ण के बारे में और भी इस प्रकार बताया।

"कुम्भकर्ण पैदा होते ही, भूख के कारण हज़ारों की संख्या में आदमियों को खाने लगा। लोग डरकर इन्द्र के पास गये। इन्द्र ने गुस्सा होकर कुम्भकर्ण पर वज्रायुध का प्रयोग किया। कुम्भकर्ण ने ऐरावत पर सवार होकर, उसके दान्त निकालकर, इन्द्र की छाती में घुसेड़ दिये।

इन्द्र लोगों को साथ लेकर, ब्रह्मा के पास गया। उसने ब्रह्मा से शिकायत की कि कुम्भकर्ण लोगों को खा रहा था। देवताओं का अपमान कर रहा था। आश्रमों को उजाड़ रहा था और पर-स्त्रियों का अपहरण कर रहा था।

ब्रह्मा ने सब राक्षसों को बुलाकर, उनमें कुम्भकर्ण को देखा। उसने कुम्भकर्ण से कहा—"विश्रवसु ने क्या लोगों को मारने के लिए तुम्हें पैदा किया था? अब से तुम सुधबुध सब खोकर सोते रहो।"

कुम्भकर्ण को ब्रह्मा के सामने ही नीन्द आने लगी और वह सोने लगा। यह देख रावण ने कहा—"बाबा....अपने परपोते को यों शाप देना अन्याय है। इसका निद्रा और जागरण का समय कृपया निश्चित कर दो।"

"यह छः महीने सोकर, एक दिन जागा रहेगा।" ब्रह्मा ने कहा।

विभीषण ने राम को ये बातें बताकर कहा—"राम, तुम्हारे हमले से डरकर अब रावण ने सोते कुम्भकर्ण को उठा दिया है। उसको देखकर ही, जो वानर भागे जा रहे हैं, वे उसके सामने खड़े होकर युद्ध क्या करेंगे? इसलिए हमें वानरों से यह कहना होगा कि वह एक चलनेवाला यन्त्र है।"

राम ने नील से वानर सेना को युद्ध के लिए सन्नद्ध होने के लिए कहा। गवाक्ष, शरभ, हनुमान, अंगद एक एक पहाड़ लेकर लंका के द्वार पर खड़े हो गये।

इस बीच कुम्भकर्ण रावण के घर गया। उसने अपने भाई को, पुष्पक में शोकग्रस्त बैठे पाया।

कुम्भकर्ण को देखते ही, रावण ने स्नेहवश उसका आलिंगन किया।

कुम्भकर्ण ने भाई के चरण छूकर कहा—"मुझे नीन्द से उठाने का क्या कारण है? क्या हो गया है? किसको मौत बुला रही है?"

"तुम चूँकि बहुत दिनों से सो रहे थे इसलिए तुम न जान सके, कि राम मेरे ऊपर क्या आफत ले आया है? राम, सुग्रीव के साथ समुद्र पार करके आ गया है और हमारी खबर ले रहा है। लंका के बाग और जंगल देखो, सभी जगह वानर ही वानर हैं। हमारे मुख्य राक्षसों को वानर मार रहे हैं। हम मुख्य वानरों को मारते नजर नहीं आते। तुम बड़े बलशाली हो, हमने तुम्हें इसलिए उठाया है, ताकि तुम हमारी मदद कर सको।" रावण ने कुम्भकर्ण से यों कहा।

कुम्भकर्ण हँसा।

"जब हमने पहिले इस विषय में चर्चा की थी, तो तुम्हारा हित जाननेवालों ने कहा था कि हम पर कोई आपत्ति आनेवाली थी। वह आपत्ति अब आ गई है। बिना आगे पीछे देखे, तुम घमंड में सीता को उठा ले आये थे। जो हमारा भाई विभीषण कहे वैसा करो।"

रावण ने यह सुन खिझकर कहा— तुम छोटे हो, मैं बड़ा हूँ। मेरा गौरव रखा जाना चाहिए। तुम्हारे लिए मुझे परामर्श देना व्यर्थ प्रयास है। जो हो गया है, उसके बारे में अब क्यों सोचा जाये? जो करना है, उसके बारे में बताओ, जो मैंने गलती की है, उसको तुम अपनी वीरता से ठीक कर दो। इसी में बुद्धिमत्ता है। वीरता है।"

यह देख रावण क्रुद्ध था, कुम्भकर्ण ने धीमे धीमे ढ़ाढ़स बंधाते हुए कहा— "तुम दुखी न हो, गुस्सा न करो। मैं चूँकि तुम्हारा भाई हूँ और हितैषी हूँ, इसलिए जो कुछ मुझे कहना था, मैंने कह दिया है। युद्ध में राम, लक्ष्मण को मारकर तुम्हारी इच्छा पूरी करूँगा। राम का सिर लाकर, तुम्हारे सामने रखकर, तुम्हें सन्तुष्ट करूँगा। जब तक मैं जीवित हूँ, तब तक तुम्हें राम से क्या भय है? मुझे युद्ध के लिए भेजो। मुझे शस्त्रों की कोई जरूरत नहीं है। खाली हाथों से ही मैं कितने ही योद्धाओं को मार सकता हूँ।"

कुम्भकर्ण की बातें सुनकर महोदर ने क्रुद्ध होकर कहा।

"तुम गंवार हो, बेअक्ल हो। घमंडी हो, क्यों रावण ऐसे काम करेगा, जो नहीं किये जाने चाहिए? कह रहे हो कि खराब काम करने का ही यह बुरा नतीजा

है, इसके लिए क्या प्रमाण हैं? क्या अच्छे कामों से दुख और बुरे कामों से सुख नहीं मिल रहा है? सीता का अपहरण करने की रावण को इच्छा हुई। उस इच्छा का हमने भी समर्थन किया। खैर, उसे छोड़ो। कह रहे हो कि तुम अकेले ही युद्ध के लिए जाओगे। जनस्थान में जिसने इतने सारे राक्षसों को मार दिया था, उस राम को तुम अकेले कैसे मार सकोगे?" महोदर ने कहा।

महोदर ने बताया कि वह द्विजिहु, संहाद्रि, कुम्भकर्ण, वितर्धन पाँचों जाकर, राम को मारें। राम मर गया तो ठीक है, यदि घायल होकर, लहूलुहान होकर ये वापिस आये तो रावण से कहेंगे। "हमने राम लक्ष्मण को खा लिया है।" तब रावण, सीता को मनायेगा, धन, सुवर्ण देकर, उसके मन को वश में कर लेगा। बिना, रावण के युद्ध में गये, राम का मुकाबला किये बगैर ही सीता उसके वश में आ जायेगी। सब ठीक को जायेगा, यह महोदर की चाल थी।

यह सुन कुम्भकर्ण ने कहा—"इस तरह की बातें कभी न करना, ज़रा सम्भलकर बात करो।" उसने महोदर को फटकारा।

उस जैसों की सलाह सुनकर, रावण की यह हालत हुई थी। युद्ध का नाम लेते ही डरनेवाले महोदर जैसे लोग रावण की हाँ में हाँ मिलाते, उसका पथ प्रदर्शन तो क्या करते, उसकी छाया से बन गये थे।

कुम्भकर्ण की बातें सुनकर रावण ने ज़ोर से हँसकर कहा—"महोदर, राम से डरता है। इसलिए युद्ध में न जाने के लिए कह रहा है। तुम जाकर युद्ध में

विजयी होकर आओ, राम, लक्ष्मण और वानरों को खाकर आओ।"

कुम्भकर्ण ने एक विचित्र भाला लिया। उसे बड़े सारे लोहे से बनाया गया था। उसको सोने से सज़ाया गया था। उस पर लाल फूलों की मालायें लगी थीं। वह इन्द्र के वज्र से कुछ कम न था।

उस भाले को लेकर, कुम्भकर्ण ने कहा कि वह अकेला ही युद्ध में जायेगा और उसे किसी प्रकार के सेना की ज़रूरत न थी।

रावण ने उससे सेना हथियार ले जाने के लिए कहा, क्योंकि युद्ध में अकेले पर खतरा अधिक होता है। उसने अपने भाई के गले में रत्नोंवाला सोने का हार पहिनाया। उसने उसको बाहुबन्द, अंगूठी आदि, आभूषण दिये—अच्छी गन्धवाली फूल मालायें डालीं। कानों में बालियाँ पहिनायीं। भारी सोने का कवच दिया। आशीर्वाद दिया।

कुम्भकर्ण ने भाई का आलिंगन किया। उसके चारों ओर प्रदक्षिणा की। साष्टान्ग नमस्कार करके वह युद्ध के लिए निकल पड़ा।

उसके पीछे बलशाली, राक्षस वीर, बड़ी सेना के साथ हथियार लेकर निकल पड़े।

युद्ध के लिए निकलते समय, चूँकि कुम्भकर्ण ने अपना शरीर फुला रखा था इसलिए उसने प्राकार को लाँघकर, वानर सेना पर हमला करना चाहा। उसको देखकर, वानर इस तरह तितर बितर भागे, जिस तरह आन्धी के सामने बादल भागते हैं।

कुम्भकर्ण को देखकर भागनेवालों में वानरवीर, नल, नील, गवाक्ष, कुमुद आदि भी थे। अंगद ने उन्हें देखकर कहा—"तुम अपने आत्मगौरव, पराक्रम आदि को

भूलकर, डर डराकर, कहाँ भाग रहे हो? वह जो आ रहा है, वह राक्षस नहीं है। भय पैदा करनेवाला खिलौना है। आओ, इस खिलौने का नाश करदें।"

यह सुन पीछे भागनेवालों में जोश आ गया और वे कुम्भकर्ण पर हमला करने लगे। उन्होंने जो पहाड़, पेड़, पत्थर, उस पर फेंके, उनसे वह बिल्कुल न डरा। उसे और गुस्सा आ गया और वह और ज़ोर शोर से वानरों को मारने लगा।

इस हमले से वानर फिर सिर पर पैर रखकर भागने लगे। कुछ आकाश में उड़ गये। कुछ जाकर समुद्र में गिर पड़े और कई पुल पर से भागने लगे। कुछ भालू, पेड़ों पर चढ़ गये। कुछ जाकर पहाड़ों में छुप छुपा गये। कुछ चित्त गिर गये। कुछ बेहोश हो गये। कुछ ऐसे लेट गये, जैसे मर मरा गये हों।

"ठहरो....ठहरो...." अंगद ने वानरों को बुलाया। योद्धाओं को, या तो शत्रु को मारकर कीर्ति पानी चाहिए, नहीं तो शत्रु के हाथ मर कर ब्रह्मलोक पहुँचना चाहिए। पर डरपोकों की तरह यूँ भागना नहीं चाहिए। कुम्भकर्ण जरूर राम के हाथ मरकर रहेगा।" उसने बन्दरों से कहा।

परन्तु उन्होंने कहा—"हमें कुम्भकर्ण मारे जा रहा है। हम जा रहे हैं। यह काफ़ी है यदि हमारे प्राण बच गये।" कहकर वे कुम्भकर्ण को आता देख, भाग निकले।

परन्तु भागते हुए वानरों को समझा बुझाकर जैसे तैसे अंगद और हनुमान मिलकर उनको वापिस ले आये।

फिर हनुमान बारह वानर योद्धाओं को साथ लेकर, युद्ध के लिए निकल पड़ा।

उनके साथ वृषभ, शरभ, मैन्द, धूम्र, नील, कुमुद, सुषेण, गवाक्ष, रंभा, तार, द्विविद और पनस थे।

इनके युद्ध करने से कई राक्षस, हाथी, घोड़े और ऊँट मारे गये। कई रथ और वाहन टूट टाट गये। हनुमान ने हवा में उड़कर, कुम्भकर्ण पर पत्थरों और पेड़ों की वर्षा कर दी। कुम्भकर्ण ने उन सबको अपने भाले से दूर फेंक दिया। जब कुम्भकर्ण वानरों को भगाता आ रहा था, तो हनुमान एक पहाड़ लेकर, उसका रास्ता रोककर खड़ा हो गया। जब हनुमान ने उस पहाड़ को लेकर फेंका, तो कुम्भकर्ण का सिर फूट पड़ा और सारा शरीर खून से लथपथ हो गया। जब कुम्भकर्ण ने अपने भाले से मारा, तो हनुमान खून उगलता, बेहोश गिर गया।

हनुमान के गिरते ही, वानर फिर भागने लगे। नील ने उनको रोका और उसने कुम्भकर्ण पर बड़ा पत्थर फेंका। उस पत्थर को कुम्भकर्ण ने मुट्ठी में लेकर चूरा चूरा कर दिया। पाँचों वानर वीर, कुम्भकर्ण से जा भिड़े, उसे पत्थरों और पेड़ों से मारा, हाथ, पैर से मारा। परन्तु कुम्भकर्ण

टस से मस न हुआ। उसने उन पाँचों को मार दिया।

यह देख, हजारों वानरों ने कुम्भकर्ण पर हमला किया। कुम्भकर्ण उन्हें पकड़कर खाने लगा। वानरों में हाय तोबा मच गई। उन्होंने जाकर, राम की शरण माँगी।

अंगद ने कुम्भकर्ण पर ज़ोर से एक बड़ा पत्थर मारा। कुम्भकर्ण ने जब गुस्से में अपना भाला फेंका, तो अंगद उससे बचकर, कुम्भकर्ण के पास गया। उसकी छाती पर ज़ोर से मारा। उस चोट के कारण कुम्भकर्ण मूछित हो गया, फिर वह

तुरत होश में आया। उसने अंगद को हथेली में पकड़कर बेहोश कर दिया। भाला लेकर वह सुग्रीव की ओर लपका।

कुम्भकर्ण ने अपना भाला घुमाकर, सुग्रीव पर फेंका। इतने में हनुमान ने आकर उसे पकड़ लिया, उसे दोनों हाथों से तोड़कर फेंक दिया। बड़े सारे लोहे से बने भाले को जब हनुमान ने घुटने पर रखकर तोड़ा तो वह एक तिनके की तरह टूट गया।

भाले के चले जाने पर कुम्भकर्ण ने सुग्रीव पर एक पत्थर फेंककर, उसे मूर्छित कर दिया। मूर्छित सुग्रीव को कुम्भकर्ण उठाकर ले गया। उसका ख्याल था कि सुग्रीव के उठा ले जाने से वानर सेना, राम लक्ष्मण कमज़ोर हो जायेंगे। वह सुग्रीव को लेकर लंका चला गया। हनुमान ने एक क्षण यह सोचा कि कुम्भकर्ण से लड़कर सुग्रीव को छुड़ा लिया जाये, फिर उसने उस समय ऐसा करना व्यर्थ समझा। क्योंकि होश आते ही, सुग्रीव अपने आप अपने को छुड़ा सकता था। यह सोचकर भयभीत वानरों को हौंसला देता हनुमान वहीं रह गया।

लंका के नागरिकों ने जब कुम्भकर्ण पर सुगन्धित जल छिड़का, तो सुग्रीव को होश आ गया। वह सोचने लगा कि अब क्या किया जाये? फिर उसने अपने नाखूनों से कुम्भकर्ण के कान, नाक और कनपटी काट ली। कुम्भकर्ण ने गुस्से में सुग्रीव को ज़मीन पर दे पटका, फिर उसे कुचला। फिर भी सुग्रीव ने इसकी परवाह न की। वह वायुवेग से उड़ता राम के पास आकर मँड़राया।

मयूरध्वज

एक बार युधिष्ठिर ने अश्वमेघ यज्ञ करने का निश्चय किया। जो अश्व यज्ञ के लिए चुना गया था, उसे देश में छोड़ दिया गया। उसका रक्षक अर्जुन, कुछ सैनिकों के साथ उसके था। कृष्ण भी, बिना अस्त्रशस्त्र के उनके साथ थे।

यज्ञ का अश्व, जगह-जगह घूमता-घूमता थोड़े दिनों बाद कौन्डिन्य नगर के पास पहुँचा। उस नगर के युवराज ताम्रध्वज ने यज्ञ के अश्व को देख, उसके मुँह पर लगे, पत्र को पढ़ा।

"यह युधिष्ठिर का अश्व है। इसके साथ इसकी रक्षा करता अर्जुन आ रहा है। यदि इस घोड़े को कोई पकड़ेगा, तो वह या तो अर्जुन से पराजित होगा, नहीं तो मारा जायेगा।"

"अर्जुन को इतना अभिमान क्यों है—उस अभिमान को कम करना ही होगा...." ताम्रध्वज ने कहा। तुरत उसने यज्ञ के अश्व को बाँध दिया। कुछ देरी में, सशस्त्र सैनिक, गाण्डीव पकड़े अर्जुन और उसके पीछे कृष्ण वहाँ आये।

"किसने यज्ञ के अश्व को यहाँ बाँध रखा है?" अर्जुन ने ताम्र ध्वज से पूछा। ताम्रध्वज ने निर्भीक होकर कहा—"मैंने...."

"तुम छोटे हो। इसलिए माफ़ किये देता हूँ। अश्व को छोड़ दो। जानते हो, यह अश्व किस का है और मैं कौन हूँ।" अर्जुन ने कहा।

"यह देख अश्व किसका है, यह तो मालूम कर ही लिया है। यदि दम हो, तो

छोड़कर ले जा सकते हो।" ताम्रध्वज ने कहा।

यह सुन अर्जुन आगबबूला हो गया। उसने गाण्डीव पर बाण लगाकर कहा—"तुम जानबूझ कर, अपनी मौत आप बुला रहे हो।"

ताम्रध्वज भी बाण चढ़ाकर सामने आया। युद्ध प्रारम्भ हुआ।

कुछ देर युद्ध के बाद, ऐसा प्रतीत हुआ जैसे ताम्रध्वज ही अधिक बलवान हो। अर्जुन का गाण्डीव न उसका धैर्य साहस ही, ताम्रध्वज को मैदान से हटा सका। यह देख, अर्जुन चकित होकर, युद्ध भूमि छोड़ दूर कृष्ण के पास गया। उसने अपमानित होकर कहा—"कई युद्ध मैंने किये हैं। मैं इस बालक से क्यों हराया जा रहा हूँ?"

कृष्ण ने हँसते हुए कहा—"जब युद्ध है, तो एक की विजय और दूसरे की पराजय निश्चय ही है।"

"हो सकता है, यह सच है। पर जब तुम मेरे साथ हो, तब मेरी पराजय कैसी?" अर्जुन ने पूछा।

"अर्जुन, तुम्हारे भाई युधिष्ठिर के धर्म बल की अपेक्षा—ताम्रध्वज के पिता मयूरध्वज का धर्म बल कोई कम नहीं है। इसलिए तुम्हारी शक्ति और सामर्थ्य के अनुसार जय और अपजय हुई।" कृष्ण ने कहा।

अर्जुन ने एक क्षण, सिर झुकाकर कहा—"मेरे गाण्डीव और शौर्य की बात तो छोड़ो, पर क्या यह मानने के लिए कहते हो कि युधिष्ठिर के समान और कोई भी धर्मात्मा है?"

"सच कहा जाये, तो मयूरध्वज युधिष्ठिर से भी अधिक धार्मिक है। चाहो तो,

सिद्ध कर सकता हूँ। मेरे साथ आओ।" कृष्ण यह कर चल पड़े।

कृष्ण और अर्जुन गुरु और शिष्य का रूप धारण कर मयूरध्वज के दरबार में गये। मयूरध्वज ने सिंहासन से उतर कर, सादर उनका स्वागत किया।

"मयूरध्वज महाराज, मैं बड़ी आपत्ति में हूँ और आप की मदद के लिए आया हूँ। यदि अभय दें, तो मैं बताऊँगा।" गुरु के वेष में कृष्ण ने कहा।

इस पर मयूरध्वज ने कहा—"अभय देता हूँ तुम पर कोई भी आपत्ति हो, बचाऊँगा।" "महाराज, तो सुनिये। आज मेरे लड़के का विवाह है। मैं उसे साथ लेकर कन्यादाता के घर जा रहा था, जंगल में हमें एक शेर दिखाई दिया, उसने कहा कि वह मेरे लड़के को आहार के लिए ले लेगा। मैंने कहा कि मेरे लड़के को छोड़ दो। चाहो तो मुझे खालो। परन्तु उस शेर ने कहा कि मुझ बूढ़े का माँस उसे नहीं चाहिए था। यदि मयूरध्वज, चूँकि वे महाराजा हैं, खाने के लिए मिल गये, तो तुम्हारे लड़के को छोड़ दूँगा। पुत्र मोह के कारण आपके पास आया हूँ।" कृष्ण ने कहा।
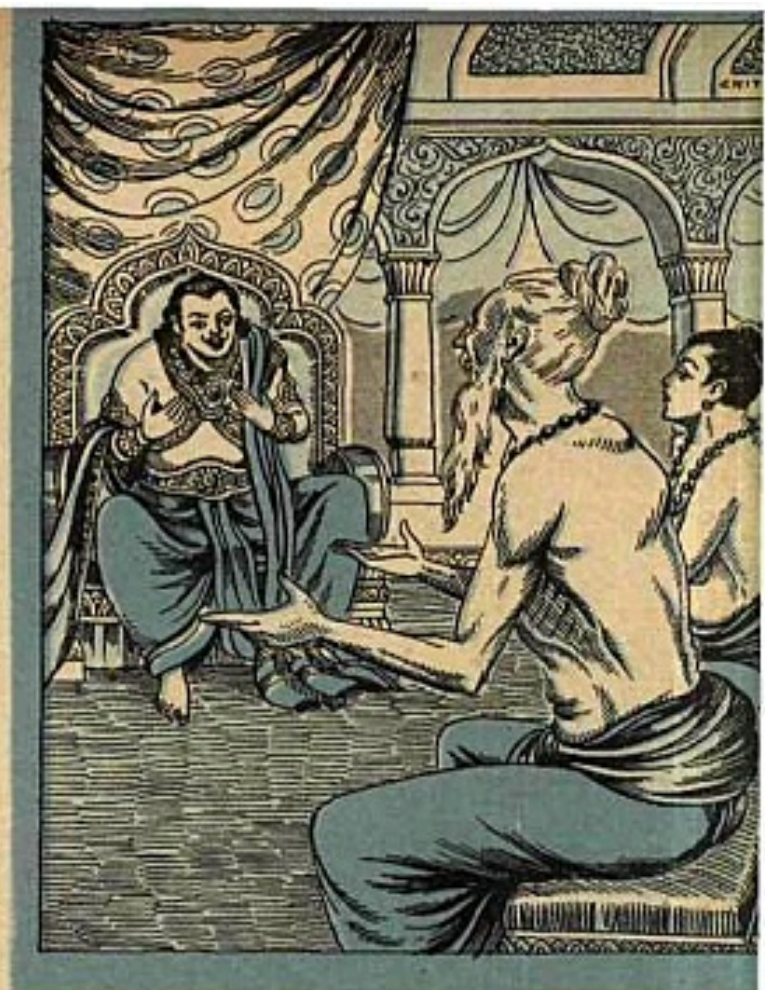
मयूरध्वज के कहा—"ब्राह्मणोत्तम! आप मेरे मांस को शेर को देकर, अपने पुत्र की रक्षा कर सकते हैं।"

"महाराज! मैं आपकी उदारता और धार्मिकता के लिए कितना की कृतज्ञ हूँ। शेर ने आपका सारा शरीर नहीं माँगा है, उसने कहा है, यदि उसे दाँया भाग मिल जाये, तो काफी है। उसने यह भी कहा कि यदि आपने वह बिना अपनी पत्नी और सन्तान की आँखों में आँसू लाये, दिया, तभी वह लेगा।" कृष्ण ने कहा।

मयूरध्वज इसके लिए मान गया, परन्तु दरबारियों में खलबली मच गई। यह सुन, मयूरध्वज की पत्नी रोती रोती आयी और पति के पैरों पर पड़ गई।

मयूरध्वज ने मन्त्री द्वारा एक आरा मँगवाया। उसने अपनी पत्नी और लड़के से आरा पकड़कर उसके शरीर के दाँये भाग को काटकर ब्राह्मण को देने के लिए कहा।

"मयूरध्वज की पत्नी और लड़का आरा पकड़कर उसका शरीर काटने जा रहे थे, कि मयूरध्वज की बाँयी आँख में तरी आ गई।

यह देख कृष्ण ने कहा—"राजा, आप दुःखी हो रहे हैं। आप जो इस प्रकार दान देंगे, उससे हमारा कोई फायदा न होगा।"

"ब्राह्मणोत्तम! मैं दुःखी नहीं हो रहा हूं। मेरे शरीर का दाँया भाग तो एक बड़े कार्य के लिए उपयुक्त हो रहा है। उसी तरह यदि बाँये भाग का भी उपयोग हुआ, तो कितना अच्छा होगा, सोच मैं दुःखी हो रहा हूं।" मयूरध्वज ने कहा।

उसी समय कृष्ण और अर्जुन अपने निजी रूप में मयूरध्वज के समक्ष प्रत्यक्ष हुए। भक्ति से हाथ जोड़े खड़े हुए मयूरध्वज को देखकर, कृष्ण ने आशीर्वाद दिया। फिर उसने अर्जुन की ओर मुड़कर कहा—"अब जो भ्रम तुम्हें सता रहे थे, लगता है, उन सब का निवारण हो गया है।"

"मेरी भ्रान्ति चली गई है। क्षमा कीजिये" अर्जुन ने कहा। कृष्ण ने अर्जुन और ताम्रध्वज में मैत्री करवायी। मयूरध्वज को उसने युधिष्ठिर के यज्ञ में निमन्त्रित किया।

संसार के आश्चर्य :

३८. कार्नाक मन्दिर द्वार

मिश्र में कार्नाक मन्दिरों के खंडहरों का यह द्वार है। यह संसार में प्रसिद्ध है। इसका निर्माण २४६-२२२ ई. पू. तृतीय टोलमी के समय हुआ था। द्वार के उपरले भाग पर सूर्य का चिन्ह है। नीचे के चित्र में, राजा को देवताओं की प्रार्थना करता दिखाया गया है।

Photo by A. S. Lakdawala
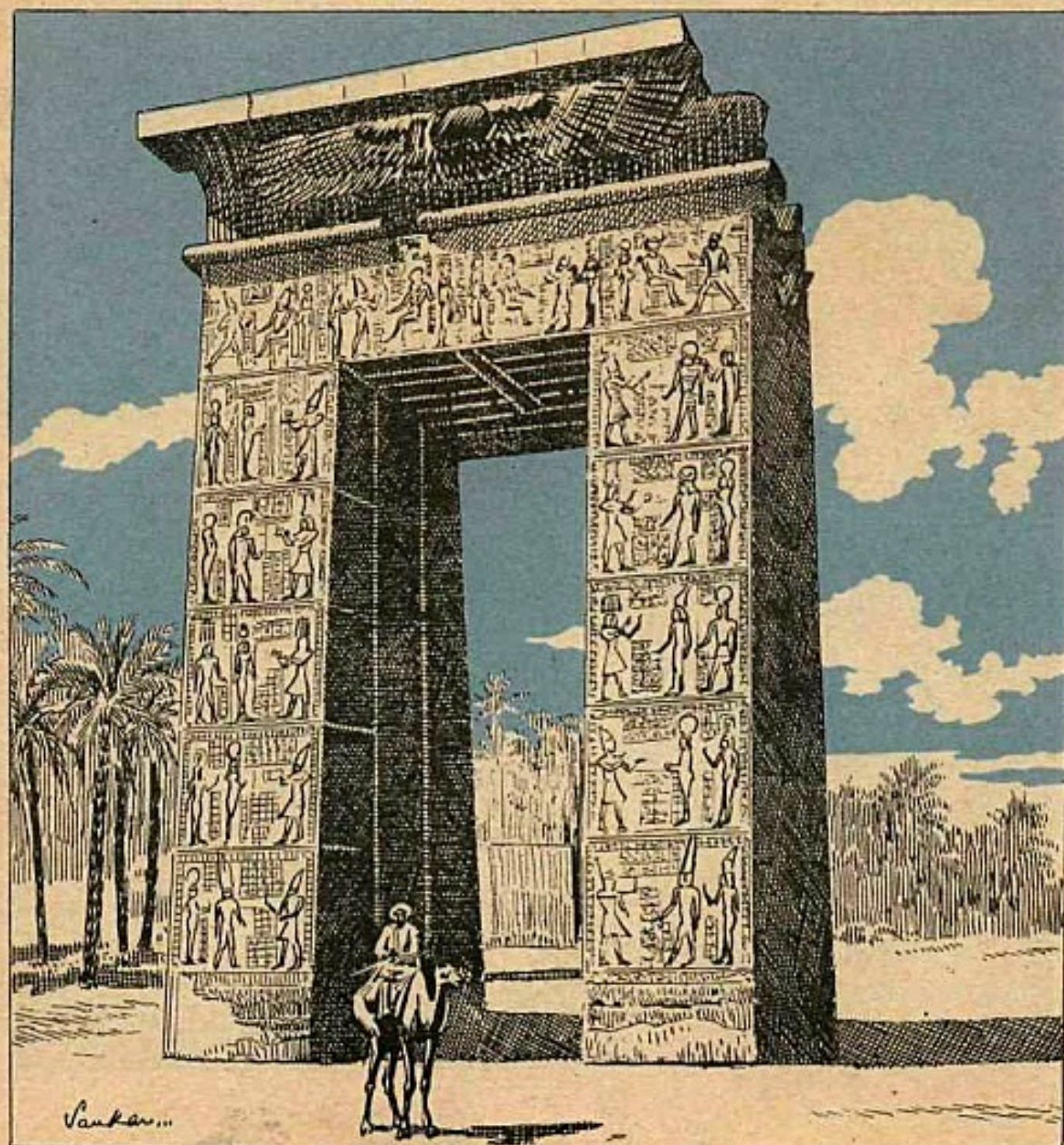
पुरस्कृत परिचयोक्ति

बापू का जीवन आधार!

प्रेषिका : कु. नीरजा स्वानी - नयी दिल्ली

Photo by P. V. Subramaniam
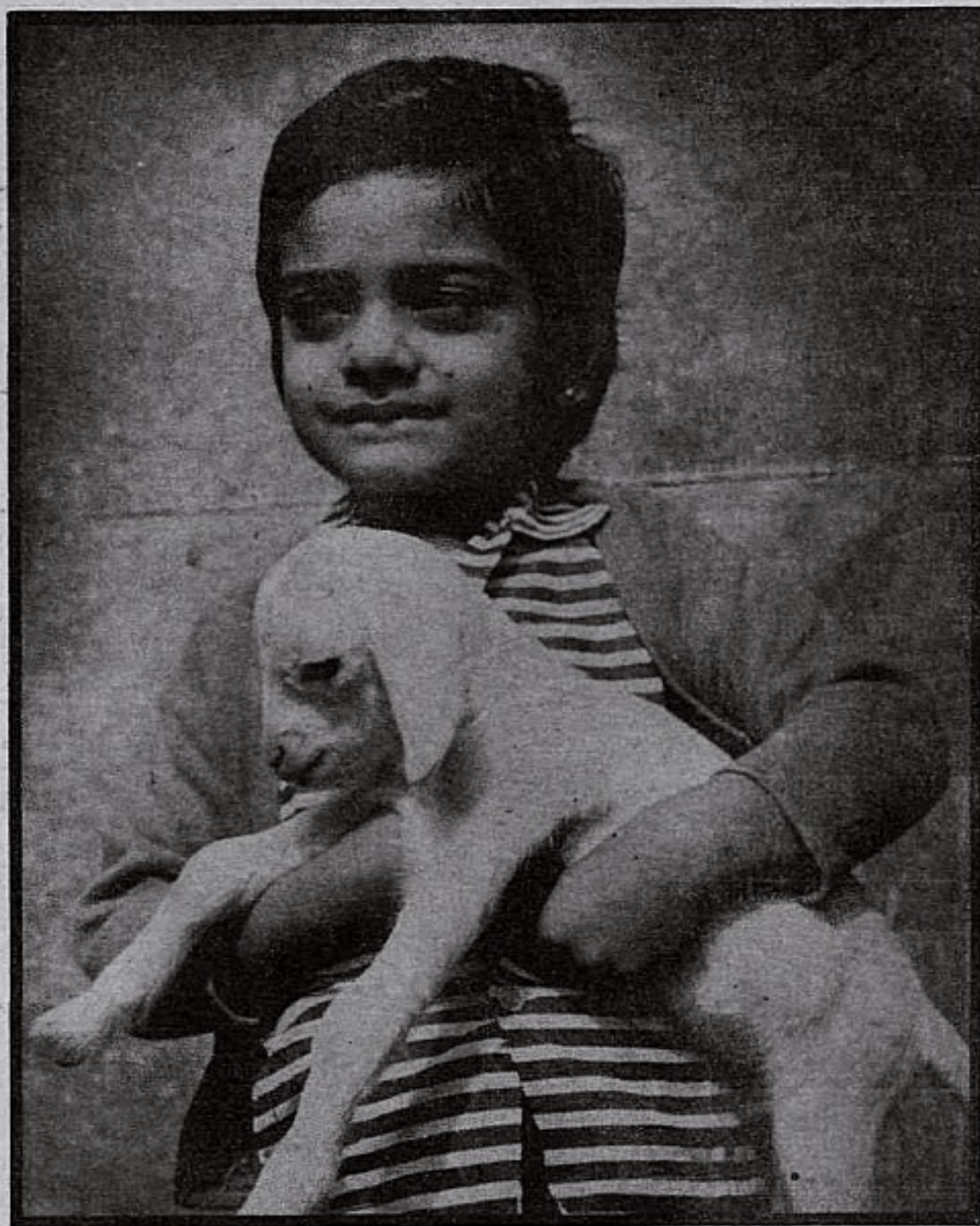
पुरस्कृत
[illegible]

मुझको है इससे प्यार !!

प्रेषिका :
कु. नीरजा स्वानी - नयी दिल्ली

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

अप्रैल १९६५ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें !

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ फरवरी १९६५ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वडपलनी, मद्रास-२६

फरवरी – प्रतियोगिता – फल

फरवरी के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषक को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: बापू का जीवन आधार !
दूसरा फ़ोटो: मुझको है इससे प्यार !!

प्रेषिका: कुमारी नीरजा स्वामी,
घर नं. २३०, III सेक्टर, नयी दिल्ली - २२

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

ब्रिटेनिया
बिस्कुट